 ੧ੴ सतिगुर प्रसादि ॥ 

गुर गिआन अंजन सचु नेत्री पाइआ ॥
अंतरि चानणु अगिआनु अंधेरु गवाइआ ॥

मासिक

गुरमति ज्ञान

भादों-आश्विन, संवत् नानकशाही ५४५
वर्ष ७ अंक १ सितंबर 2013

संपादक : सिमरजीत सिंघ *एम. ए., एम. एम. सी.*
सहायक संपादक : जगजीत सिंघ

चंदा

सालाना (देश)	१० रुपये
आजीवन (देश)	१०० रुपये
सालाना (विदेश)	२५० रुपये
प्रति कापी	३ रुपये

चंदा भेजने का पता
सचिव, धर्म प्रचार कमेटी
(शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी)
श्री अमृतसर-१४३००६
फोन: 0183-2553956-60
एक्सटेंशन नंबर
वितरण विभाग 303 संपादकीय विभाग 304



फैक्स: 0183-2553919
e-mail : gyan_gurmat@yahoo.com
website : www.sgpc.net

विषय-सूची

गुरबाणी विचार

सभ किछु घर महि बाहरि नाही ॥ बाहरि टोलै सो भरमि भुलाही ॥
गुर परसादी जिनी अंतरि पाइआ सो अंतरि बाहरि सुहेला जीउ ॥१॥
झिमि झिमि वरसै अंम्रित धारा ॥ मनु पीवै सुनि सबदु बीचारा ॥
अनद बिनोद करे दिन राती सदा सदा हरि केला जीउ ॥२॥
जनम जनम का विछुड़िआ मिलिआ ॥ साध क्रिपा ते सूका हरिआ ॥
सुमति पाए नामु धिआए गुरमुखि होए मेला जीउ ॥३॥
जल तरंगु जिउ जलहि समाइआ ॥ तिउ जोती संगि जोति मिलाइआ ॥
कहु नानक भ्रम कटे किवाड़ा बहुड़ि न होईऐ जउला जीउ ॥४॥ *(पन्ना १०२)*

माझ राग में उच्चारण किया गया उपरोक्त शबद श्री गुरु अरजन देव जी का है। गुरु जी प्रभु की विद्यमानता का एहसास मानव को उसके हृदय-घर में करवाते हुए बाहरी भटकना से सुचेत करते हैं। गुरु जी फरमान करते हैं कि सारे आत्मिक आनंद मनुष्य के हृदय में ही हैं। इसका एहसास मनुष्य को प्रभु-कृपा से होता है। जो लोग इस आत्मिक आनंद की प्राप्ति के लिए बाहर भटकते हैं, वे इस भ्रम में हैं कि यह आनंद शायद किसी विशेष स्थान पर है। गुरु की कृपा से, गुरु के मार्गदर्शन से जिन मनुष्यों ने अपने हृदय-घर में परमात्मा के निवास का एहसास पा लिया है वे प्रभु-चरणों में जुड़े हुए सदा सुखी रहते हैं। कहने से तात्पर्य कि सारा आत्मिक आनंद मनुष्य के भीतर ही विद्यमान है। आवश्यकता है इस प्रभु-रूप आत्मिक आनंद को अपने अंदर से प्रकट करने की। इस आत्मिक अडोलता की दशा में नाम-अमृत की धारा धीरे-धीरे बरसती है। ऐसे में मनुष्य का मन गुरु का शबद, उपदेश सुनकर इसके अमृत-रस को पीता जाता है, ठीक उसी प्रकार जैसे मीठी-मीठी वर्षा होने से वर्षा का पानी धरती में समाता रहता है। ऐसी अवस्था में मन हर समय आत्मिक आनंद की अनुभूति पा लेता है, सदा परमात्मा का एहसास पाकर प्रसन्न होता है।

गुरु जी आगे फरमान करते हैं कि इस प्रकार की भक्ति, चिंतन करने वाला, प्रभु से कई जन्मों से बिछुड़ा मनुष्य प्रभु का मिलाप हासिल कर लेता है। गुरु की कृपा से सूखा हुआ मनुष्य-मन हरा-भरा हो जाता है अर्थात् वियोग में तड़पता मन आनंदित हो उठता है। जब मनुष्य गुरु द्वारा श्रेष्ठ मति प्राप्त करता है तो वो गुरु द्वारा दर्शायी जीवन-राह पर चलते हुए प्रभु-नाम का सिमरन करता है। इस प्रकार प्रभु-नाम-सिमरन में डूबे मनुष्य (गुरमुख) का मिलाप प्रभु से हो जाता है।

गुरु जी शबद की अंतिम पंक्तियों में फरमान करते हैं कि जिस प्रकार जल की तरंगें उठकर पुन: जल में ही समा जाती हैं इसी प्रकार गुरु की शरण में गया मनुष्य प्रभु-नाम-सिमरन की कमाई करता हुआ प्रभु में ही समा जाता है अर्थात् मनुष्य का चित्त हर पल प्रभु-भक्ति में ही लगा रहता है। ऐसे मनुष्य की भटकना समाप्त हो जाती है, भ्रम के बंद किवाड़ खुल जाते हैं तथा वो पुन: इस भटकना रूपी दलदल में नहीं फंसता अर्थात् मनुष्य का मन प्रभु-भक्ति में स्थिर होकर चंचलताई से, भटकना से मुक्त हो जाता है। 



श्री गुरु ग्रंथ साहिब में सर्वसांझीवालता का उपदेश

सोने की चिड़िया कहे जाने वाले भारत देश की खुशहाली बुरी नज़र वालों को अच्छी न लगी। यहां निवास करते लोगों के प्यार एवं मेलजोल को ऐसी नज़र लगी कि यह देश सदियों भर की गुलामी की गर्त में जा डूबा। बाहरी हमलावर यहां के लोगों की लूटपाट कर, उन्हें मारपीट कर अपनी राजनीतिक सत्ता कायम करते रहे तथा अपने आप को अव्वल दर्जा और यहां के निवासियों को दूसरा दर्जा समझकर व्यवहार करते रहे। ऐसा समय भी आया जब भारत की धरती पर मज़हबी नफ़रत ने बहुत भयानक रूप धारण कर लिया। समय-समय पर चेतंन मनुष्यों ने इसके विरुद्ध आवाज़ बुलंद करने की कोशिश भी की। तेरहवीं सदी में शेख़ फरीद जी ने यहां के निवासियों की दयनीय दशा को प्यार-मोहब्बत एवं प्रभु-भक्ति के रंग में रंगकर खुशहाल समाज सृजित करने की जद्दोजहद की। इसी शृंखला में चलते हुए भक्त कबीर जी, भक्त नामदेव जी, भक्त रविदास जी आदि भक्त साहिबान ने भी जनसाधारण को इस जिल्लत भरी ज़िंदगी में से निकालने की भरपूर कोशिश की। वर्णननीय है कि ये भक्त साहिबान खुद भी भारत की प्राचीन काल से चली आ रही जात-पात की अमानवीय प्रणाली से पीड़ित थे। इन भक्त साहिबान ने जनसाधारण में से धार्मिक खींचतान को मिटाते हुए सबको मानव एकता के सूत्र में पिरोने के प्रकृत यत्न लिए, मगर स्थिति इस हद तक बिगड़ चुकी थी कि सुधार का प्रभाव बहुत कम नज़र आ रहा था।

श्री गुरु नानक देव जी के समय तक हालात और भी खराब हो चुके थे। श्री गुरु नानक देव जी का कोमल मन हाहाकार करती जनता के दर्द को सहार न सका। उन्होंने अंधगुबार भरे युग में ज्ञान के दीपक से रोशनी करने के लिए योजना तैयार की। गुरु जी ने इस कार्य के लिए अपनी सुखदायक सरकारी नौकरी तथा घर-गृहस्थी के सुख-आराम को छोड़कर अपनी सारी ज़िंदगी लोगों को सत्य का मार्ग दिखाने की योजना तैयार करके, सुलतानपुर लोधी की धरती पर 'ना को हिंदू न मुसलमान' का नारा देकर बिखरे हुए, नफ़रत की आग में जल रहे लोगों को एक मंच पर इकट्ठा करके मानव-एकता का पाठ पढ़ाने में लगा दी। सर्वसांझीवालता श्री गुरु नानक देव जी का मूल सरोकार था। श्री गुरु नानक देव जी ने अपने समय के विद्वानों, सिद्धों, नाथों, योगियों आदि से मिलकर, उन्हें सत्य के मार्ग पर चलने की प्रेरणा देकर संसार की भलाई में लगाया और उनका असल उद्देश्य उन्हें याद करवाया। गुरु जी ने शबद-ज्ञान से हर प्रकार के पाखंड, भ्रम, कर्मकांड का विरोध करके समूह जनसाधारण को सत्य का मार्ग दिखाया। गुरु साहिब ने जहां खुद बाणी का उच्चारण किया वहीं दूर-दराज क्षेत्रों में जाकर अपने समकालीन एवं पूर्वकालीन संतों-महापुरुषों की बाणी भी एकत्र की, जो समूह जनसाधारण को सर्वसांझीवालता का संदेश देती है। इसी उद्देश्य को शेष गुरु साहिबान ने जारी रखा।

श्री गुरु अंगद देव जी ने सच्ची गुरु-सेवा कमाते हुए, शबद-गुरु की युक्ति प्राप्त करके सर्वकल्याण का सिलसिला जारी रखा। श्री गुरु अंगद देव जी के बाद श्री गुरु अमरदास जी ने शबद-गुरु की मंज़िल प्राप्त करके आम जनता को इस ज्ञान-रोशनी से निहाल किया। यह सिलसिला निरंतर दसवें पातशाह श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी तक चलता रहा। समूह गुरु साहिबान को सत्य को उभारने के मार्ग पर चलते हुए कठिन संघर्ष करना पड़ा।

श्री गुरु नानक देव जी द्वारा प्रतिपादित सर्वसांझीवालता के उद्देश्य को धर्म की धारणा के साथ परिपक्व रूप में जोड़ने के लिए श्री गुरु अरजन देव जी ने अहम भूमिका निभाई। श्री गुरु अरजन देव जी ने श्री अमृतसर में श्री रामसर साहिब सरोवर के किनारे मनोहर स्थान पर बैठकर भाई गुरदास जी जैसे गुरसिक्खों की सेवाएं लेते हुए श्री गुरु ग्रंथ साहिब की बीड़ लिखवाई। यह महान कार्य सन् १६०४ ई में सम्पूर्ण हुआ। श्री गुरु अरजन देव जी ने इस लासानी ग्रंथ साहिब को लिखवाने के बाद इसका पहला प्रकाश श्री हरिमंदर साहिब, श्री अमृतसर में किया। गुरु जी ने बाबा बुड्ढा जी को पहला ग्रंथी नियुक्त कर उनसे धर्मों, मज़हबों, जातियों, क्षेत्रों के बंधनों को तोड़ते हुए सर्वकल्याणकारी निर्मल उपदेश सुनने का तथा मन में बसाने का सौभाग्य प्रत्येक स्त्री-पुरुष को बख़्शिश करवाया। यह विश्व के धर्मों के इतिहास में एक आश्चर्यजनक उदाहरण है।

साहिब-ए-कमाल श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने सन् १७०६ ई में दमदमा साहिब की धरती पर विराजमान होकर भाई मनी सिंघ जी तथा बाबा दीप सिंघ जी जैसे सिंघों की सेवाएं लेते हुए नवम् पातशाह श्री गुरु तेग बहादर साहिब की बाणी इसमें शामिल करके इस अमूल्य शबद-भंडार को सम्पूर्ण किया। सन् १७०८ ई में नांदेड़ की धरती पर ज्योति-जोत समाने से पूर्व दशम पातशाह श्री गुरु ग्रंथ साहिब को गुरगद्दी पर विराजमान करके सिक्खों को युगो-युग अटल गुरु के लड़ लगा दिया।

आज श्री गुरु ग्रंथ साहिब सारी दुनिया में सर्वसांझीवालता का संचार एवं प्रसार कर रहा है। इसमें संकलित बाणी के ३६ बाणीकार समय, स्थान, धार्मिक मत, कर्म-किरत, जात-पात, रंग-नस्ल के भिन्न-भेद को मिटाने के लिए आदर्श उदाहरण हैं। यह कुल दुनिया के मनुष्यों को सारी दूरियां त्यागकर परम पिता परमात्मा की सच्ची भक्ति, नाम-सिमरन तथा शुभ कर्म का संदेश देते हुए सरबत्त के भला का बांध बांधती है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब के उपदेश सर्वकल्याणकारी होने के साथ-साथ अति मनमोहक, विस्मादी तथा मीठे वचनों के रूप में हैं। ये हमें इसलिए भी विस्माद कराते हैं, क्योंकि ये रंग-बिरंगे, सुंदर व मनोहर काव्य रूपों एवं छंदों में हैं। इनको मानना, कमाना तथा व्यवहार में लाना हमारे अपने लिए तथा समूह विश्व के भले में है। डान किगज़ोट की एक कसौटी श्री गुरु ग्रंथ साहिब के समूह बाणीकारों पर शत-प्रतिशत लागू होती है कि "वही बढ़िया उपदेश दे सकता है जो बढ़िया जीवन जीता है।" ऐसीलेरिया का विचार है कि "जो प्रचार करते हो उसका खुद भी अभ्यास करो।" आज अवश्यकता है इस बाणी के हुक्मों-उपदेशों को पूर्ण एकाग्रता सहित सुनने, पढ़ने तथा अपनाने की!



श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी : वर्तमान चेतना के संदर्भ में

*-सिमरजीत सिंघ**

प्रत्येक युग की अपनी तरह की चुनौतियां होती हैं किंतु आधुनिक युग में चुनौतियों की संख्या तथा दर्जे दोनों बहुत विकराल रूप धारण कर चुके हैं। वर्तमान वैसे भी सबसे अधिक ध्यान देने की मांग करता है। इस मांग की पूर्ति वर्तमान चेतना के समर्थ व सभ्य रूप की पूर्ति द्वारा ही संभव हो सकती है। वर्तमान चेतना बेशक तत्कालीन वैज्ञानिक युग व इस युग की यथार्थवादी जीवन दृष्टि के असर तले काफी बलवान भी होती दिखाई पड़ रही है, जिसके साथ निभने एवं निपटने के समर्थ होने के लिए इसको अतीत की आध्यात्मिक तथा नैतिक विरासत के साथ अपनी दृढ़ सांझेदारी बनानी ही पड़ेगी। इस आध्यात्मिक तथा नैतिक विरासत की सबसे ज्यादा समर्थ व कारगर धरोहर श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी की सर्वसांझी गुरबाणी, दस सिक्ख गुरु साहिबान द्वारा प्रदान की गुरमति विचारधारा तथा सिक्खी जीवन-जाच ही है। वर्तमान चेतना में अनेक दरारें हैं, जिनकी पूर्ति सर्वसांझी गुरबाणी एवं गुरमति विचारधारा तथा सिक्खी जीवन-जाच के बिना कदाचित संभव नहीं हो सकती। इस लेख में इसी सम्बंधी वर्तमान युग की स्थिति के कुछ पक्षों पर दृष्टि डालते हुए इनका योग्य समाधान सुलझाने का प्रयास किया गया है।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी की पावन बाणी किसी खास भू-खंड की महिमा गायन करने तक ही सीमित नहीं। यह विश्व के सारे समयों के मनुष्य मात्र को सम्बोधित है। इसमें समूचे विश्व की सब तरह की तत्कालीन समस्याओं का सहज अंदाज़ में उल्लेख है। उदाहरण के रूप में सामाजिक व आर्थिक असमानता, लूटमार, कत्लोगारत, साम्राज्यवादी पासार, भुखमरी, काल आदि समस्याएं श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी की दिव्य बाणी में गहन-गंभीर चिंतन अधीन लाई गई हैं और उनका समाधान भी बख़्शिश किया गया है। प्रत्येक युग कुछ अलग व नवीन समस्याएं लेकर आता है। बीसवीं सदी मानवीय समस्याओं से ओत-प्रोत सदी के रूप में प्रत्यक्ष दीख पड़ती है। इक्कीसवीं सदी के आने पर ये समस्याएं और बढ़ीं तथा पहले से जटिल हुई हैं। इसका मुख्य कारण श्री गुरु ग्रंथ साहिब जैसे विलक्षण ज्ञान-अनुभव के ख़ज़ाने से अवगत न होना तथा इसके निर्मल, सर्वसांझे, सर्वोत्तम तथा निर्मल उपदेशों को सुन-समझकर तथा व्यवहारिक रूप में अपनाने से संकोच करना है।

मध्य काल तक सृष्टि सम्बंधी मानव ज्ञान बड़ा सीमित था। यह ज्ञान सटीक तथा वैज्ञानिक रूप वाला भी नहीं था, किंतु सृष्टि की रचना सम्बंधी श्री गुरु ग्रंथ साहिब में अंकित गुरबाणी कोई कल्पित कहानियां नहीं बनाती। गुरबाणी इसके बारे में तथ्यों के आधार पर ऐसा ज्ञान देती है जो विज्ञान की कसौटी पर खरा उतरता है। गुरबाणी के अनुसार परमात्मा के हुक्म से गैसें उत्पन्न हुईं, फिर जल तथा जल से सारी वनस्पति व जीव-जंतु पैदा हुए। यह

**संपादक, गुरमति ज्ञान एवं गुरमति प्रकाश।*

एक वैज्ञानिक सत्य है कि जहां जल है वहीं जीवन है। गुरु-वाक्य है :

--साचे ते पवना भइआ पवनै ते जलु होइ ॥
जल ते त्रिभवणु साजिआ घटि घटि जोति समोइ ॥
(पन्ना १९)

--पहिला पाणी जीउ है जितु हरिआ सभु कोइ ॥
(पन्ना ४७२)

वैज्ञानिक पक्ष से भी गुरबाणी का ज्ञान सही है। यह पहला ग्रंथ है जिसमें सृष्टि की विशालता को बेअंत बताया गया है। लाखों ही पतालों, आकाशों का वर्णन इसमें मिलता है। विज्ञान की उन्नति से गुरबाणी के वाक्यों की सच्चाई सिद्ध हो रही है। केवल इस धरती का ही नहीं परमात्मा करोड़ों ब्रह्मांडों का स्वामी है :

--कोटि बिसन कीने अवतार ॥
कोटि ब्रहमंड जा के ध्रमसाल ॥ (पन्ना ११५६)

--पाताला पाताल लख आगासा आगास ॥
(पन्ना ५)

--जो ब्रहमंडे सोई पिंडे जो खोजै सो पावै ॥
पीपा प्रणवै परम ततु है सतिगुरु होइ लखावै ॥
(पन्ना ६९५)

श्री गुरु ग्रंथ साहिब धौले बैल के सींगों पर धरती टिकी होने की जगह ब्रह्मांड की किसी निश्चित समय, निश्चित अवधि में सृजना की अवैज्ञानिक धारणा *"जा करता सिरठी कउ साजे आपे जाणै सोई"* कहकर इस विवाद को खत्म करके *"कई बार पसरिओ पासार"* व *"खेलु संकोचै तउ नानक एकै"* इस प्रसार की अनेकों बार सृजना व विनाश की बात की गई है। आईनस्टाइन जैसे वैज्ञानिक इस बात को वर्तमान युग में नि:संकोच स्वीकार करते आ रहे हैं। *"एहु अंतु न जाणै कोइ", "केते इंद चंद सूर केते केते मंडल देस", "अगंम अगंम असंख लोअ" "पाताला पाताल लख आगासा आगास", "धरती होरु परै होरु होरु"* जैसे संकेत श्री गुरु ग्रंथ साहिब की वैज्ञानिक दृष्टि को कॉपरनीक्स तथा गलैलियो से आगे स्टीफन हाकिन्स की नवीनतम खोजों के अनुरूप सिद्ध करते हैं।

धरती की उत्पत्ति के बाद मनुष्य का जन्म इस धरती पर एक अद्वितीय घटना थी। अकाल पुरख ने मनुष्य को इस धरती का सरदार बनाकर भेजा ताकि उसके द्वारा पैदा किए अन्य सभी जीवों का भला हो सके तथा मनुष्य अपने आप में सब कुछ करने के समर्थ होने के कारण उनकी मुश्किलों को समझकर उनकी भलाई कर सके। भक्त कबीर जी मानवीय जन्म की दुर्लभ प्राप्ति के बारे में हमारा ध्यान दिलाते हैं :

कबीर मानस जनमु दुलंभु है होइ न बारै बार ॥
जिउ बन फल पाके भुइ गिरहि बहुरि न लागहि डार ॥ (पन्ना १३६६)

श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी का आध्यात्मिक या रूहानी अनुभव पूर्ण खालस रूप वाला तथा सर्वोत्तम है। इस तथ्य को भी सूझवान लोग अब बिना किसी संकोच के मान रहे हैं। यह सच उचित ज़ोर देकर हमारे तक पहुंचाया गया है कि परमात्मा के मिलाप का अनुभव सिर्फ और सिर्फ मनुष्य-जन्म में ही संभव है। वास्तविक सार्थकता सांसारिक कारोबार की नहीं बल्कि प्रभु-नाम के साथ जुड़ने तथा सतसंग करने से संभव है :

भई परापति मानुख देहुरीआ ॥
गोबिंद मिलण की इह तेरी बरीआ ॥
अवरि काज तेरै कितै न काम ॥
मिलु साधसंगति भजु केवल नाम ॥ (पन्ना १२)

मनुष्य आम तौर पर सांसारिकता के बड़े असर तले है। वह वास्तविक अर्थ भरपूर रूहानियत की बात को या तो समझता ही नहीं

या इससे जान बूझकर अनजान बना हुआ है। आधुनिक युग में हम देखते हैं कि खुद को विकसित करने की लालसा में कुल्ली, गुल्ली, जुल्ली की चेष्टा के आगे अपनी इच्छाओं को बढ़ाते हुए पूरी दुनिया पर राज्य करने की इच्छाएं पैदा कर लीं तथा इनको पूरा करने के लिए खुद पर आश्रित अन्य जीवों को तो क्या बख़्शना था बल्कि इन्सान ही इन्सान का शत्रु बन गया। आज मनुष्य अपनी राज्य-शक्ति बढ़ाने के लिए दूसरे पड़ोसी देशों पर हमला करके, हज़ारों-लाखों लोगों की कुर्बानी देकर अपना राज्य बढ़ाने में फ़ख्र महसूस करता है। ये सभी घटनायें अप्राकृतिक हैं। आज भी शक्तिशाली मुल्क दूसरे मुल्कों पर अपना अधिकार जमाने की इच्छा मन में लिए बैठे हैं। धरती के एक टुकड़े पर अपना अधिकार जमाकर मनुष्य की तृष्णा नहीं बुझी बल्कि उसकी इच्छा इस धरती के आगे अन्य ग्रहों पर अधिकार जमाने तक पहुंच गयी है। इसी होड़ में आज संसार का हर मुल्क लगा हुआ है। चाहे उसके मन में यह भय भी है कि किसी अन्य ग्रह पर रह रहे प्राणी कहीं उससे ज्यादा शक्तिशाली न हों और गुस्से में आकर इस धरती को, जो मनुष्य का घर है, तबाह न कर दें। आज सारा संसार एक-दूसरे से आगे निकलने की लालसा में लगा हुआ है। मनुष्य ने एक-दूसरे को खत्म करने के लिए भी आधुनिक तरीके के बहुत खतरनाक व घातक हथियार बना लिए हैं जो एक ही बार में हज़ारों-लाखों लोगों को मृत्यु की नींद सुला सकते हैं। एक-दूसरे की देखा-देखी या अपनी सुरक्षा को यकीनन बनाने के चक्कर में हर देश अपने पड़ोसी देश से ज्यादा आधुनिक हथियार बनाने में लगा हुआ है। सांसारिक प्रभु-सत्ता की लालसा में राज्यों की हदों के विस्तार हेतु स्वार्थी राज्य-मुखी दूर देशों पर जाकर हमला करते हैं। शासकों की इस लड़ाई में निर्दोष प्रजा उनके सिपाहियों के घोर अत्याचारों का शिकार होती है। ये हथियारों से लैस मासूम लोगों का शिकार करके, उनके घरों तथा मान-सम्मान को लूटकर अपनी हउमै को शांत करते हैं। मानवता के कत्लेआम से दर्दनाक वातावरण बनता है। हज़ारों ज़िंदगियां पल भर में नष्ट हो जाती हैं, स्त्रियां विधवा हो जाती हैं। वर्तमान जंगों-युद्धों का दूसरा सबसे ज्यादा शिकार बच्चे बनते हैं। फिर साधारण लोगों पर इसका सबसे घातक असर पड़ता है।

गुरबाणी में ज़ोर, जब्र, जुल्म, अन्याय आदि की भरपूर निंदा की गयी है। जब बाबर की फौज ने सैदपुर (एमनाबाद, अब पाकिस्तान में) पर हमला किया तथा वहां के निहत्थे लोगों पर जुल्म ढाहे तो इस रौंगटे खड़े कर देने वाले दृश्य का आंखों देखा हाल श्री गुरु नानक देव जी ने अपनी दिव्य बाणी में बयान किया :

पाप की जंञ लै काबलहु धाइआ जोरी मंगै दानु वे लालो ॥
सरमु धरमु दुइ छपि खलोए कूड़ु फिरै परधानु वे लालो ॥ (पन्ना ७२२)

इससे ज्यादा करुणामयी संवेदना का शायद ही कोई प्रकटावा और हो सके जो श्री गुरु नानक देव जी ने मध्यकालीन हिंदोस्तान पर बाबर के हमले के प्रसंग में किया :

इकन्ा पेरण सिर खुर पाटे इकन्ा वासु मसाणी ॥
जिन् के बंके घरी न आइआ तिन् किउ रैणि विहाणी ॥ (पन्ना ४१८)

श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी की बाणी आधुनिक युग में संसार के लोगों को जंग से बचने के लिए चेतना देने हेतु सबसे बड़ा साधन है, जिससे

चेतनता प्राप्त करके इस धरती पर सुखमय माहौल की रचना की जा सकती है। गुरबाणी में वैर-विरोध को कोई स्थान प्राप्त नहीं। यह दृढ़ करवाया गया है कि जो किसी का बुरा नहीं सोचता, किसी के साथ वैर-विरोध नहीं करता, उसको दुख, कलेश नहीं आते :

पर का बुरा न राखहु चीत ॥
तुम कउ दुखु नही भाई मीत ॥ (पन्ना ३८६)

वैर-विरोध की तो बात छोड़ो, गुरबाणी तो किसी को फीका या कड़वा बोल बोलने से भी रोकती है, क्योंकि प्रत्येक मनुष्य में एक सच्चे प्रभु का निवास है :

इकु फिका न गालाइ सभना मै सचा धणी ॥
जे तउ पिरीआ दी सिक हिआउ न ठाहे कही दा ॥ (पन्ना १३८४)

श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी ने मनुष्य मात्र की स्वतंत्रता की समस्या को अपनी केंद्रीय समस्या बनाया है। गुरु साहिब का दृढ़ विचार है कि मनुष्य की यह गुलामी की प्रक्रिया उसके जन्म से शुरू हो जाती है तथा उसकी अंतिम सांस तक उसके साथ रहती है, इसलिए ज़रूरी है कि उसको इन ज़ंजीरों से मुक्त किया जा सके। श्री गुरु नानक देव जी ने प्रभु के अनेक गुणों में से दो गुणों पर विशेष तौर पर ज़ोर दिया है। एक यह कि वह निर्भय है तथा दूसरा यह कि वह दयावान है। प्रभु के ये दोनों गुण श्री गुरु नानक देव जी के अनुसार हर मानवीय शख़्सियत की पहचान होने चाहिए। निडरता तथा दया की स्थिति में पला मनुष्य आज़ादी के अनुभव को अपनाकर ही मनुष्य-मात्र के सांझे आदर्श को अपनी ज़िंदगी का आदर्श बना सकता है। इसीलिए श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी की बाणी मनुष्य को मनुष्य के राज्य से निकालकर प्रभु के राज्य में लाने के लिए प्रेरित करती है। इसका सीधा परिणाम यह मिलता है कि सृजित, विकसित तथा आज़ादी-पसंद कौमों को अपना संविधान प्रभु द्वारा दिए गए संविधान के अनुकूल बनाना चाहिए। कुदरत का कानून मानवीय कानून का आधार बनना चाहिए। मनुष्य के आज़ाद होने का यही एक लक्ष्य बनता है। जितनी देर मनुष्य आज़ाद नहीं उसकी सोच अधूरी है तथा जब तक उसकी सोच अधूरी है उसके अंदर सांझीवालता का एहसास पैदा नहीं हो सकता।

विश्व स्तर पर मानवीय भाईचारे की मंज़िल मिलजुल कर एक-दूसरे के लिए जीने की मंज़िल है। यह तभी संभव है, अगर हम सब भेदभाव, ऊंच-नीच तथा निजी स्वार्थों का त्याग करके एक-दूसरे के लिए निष्काम सेवा में जुट जाएं। ऐसी सेवा की प्रेरणा किसी डर, भय या कानूनी कार्यवाही द्वारा नहीं, बल्कि आपसी प्रेम से मिलती है। गुरबाणी एक ऐसे ही समाज की सृजना के लिए दिशा प्रदान करती है, जिसके नागरिक निर्भय एवं निरवैर हों और वे किसी को भय न दें और न ही किसी का भय स्वीकार करें-- *"भै काहू कउ देत नहि नहि भै मानत आन ॥"* वे सचिआर के धारणी हों-- *"सचु सभना होइ दारू पाप कढै धोइ ॥"* वे अपना हक मांगें परंतु *"हकु पराइआ नानका उसु सूअर उसु गाइ"* के अनुसार किसी का हक न खाएं। वे बाहरी भेसधारी ही न हों बल्कि *"सूचे सेई नानक जिन मनि वसिआ सोइ"* वाले सिद्धांत पर चलें।

पूरी मानवता की अगुआई करने वाले श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी की बाणी समूची मानवता को विश्व-शांति का कल्याणकारी संदेश देती है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब की पावन बाणी में हिंसा को अग्नि की नदी कहा गया है, जिसमें पड़ा

संसार जल रहा है। इस दुनिया में अशांति के वातावरण के कारण सभी जल रहे हैं, नष्ट हो रहे हैं। इस अशांति का मूल कारण जीवन में झूठ का प्रवेश है :

--हंसु हेतु लोभु कोपु चारे नदीआ अगि ॥
पवहि दझहि नानका तरीऐ करमी लगि ॥
(पन्ना १४७)

--कलहि बुरी संसारि वादे खपीऐ ॥
विणु नावै वेकारि भरमे पचीऐ ॥
राह दोवै इकु जाणै सोई सिझसी ॥
कुफर गोअ कुफराणै पइआ दझसी ॥
सभ दुनीआ सुबहानु सचि समाईऐ ॥
सिझै दरि दीवानि आपु गवाईऐ ॥ (पन्ना १४२)

संसार में परमेश्वर ने हमें अपने कर्मों को सुधारने के लिए मनुष्य बनाकर भेजा है। यहां आकर किसी को भला-बुरा कहकर झगड़ा खड़ा करना उचित नहीं, क्योंकि यह झगड़ा तो प्रभु के प्रति ही माना जाएगा तथा यह अपनी ही बर्बादी का रास्ता होगा, क्योंकि मानवता प्रति अपराध वास्तव में अपने प्रति अपराध हैं :

वारी खसमु कढाए किरतु कमावणा ॥
मंदा किसै न आखि झगड़ा पावणा ॥
नह पाइ झगड़ा सुआमि सेती आपि आपु वञावणा ॥
जिसु नालि संगति करि सरीकी जाइ किआ रूआवणा ॥ (पन्ना ५६६)

अनेकों अंतर्राष्ट्रीय समस्याओं के व्यापक जाल में आधुनिक मानवता उलझी पड़ी है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी इनमें से निकलने का कारगर समाधान प्रदान करते हैं। सभी समस्याओं का हल यह है कि जहां अपने विचार बताए जाएं वहां दूसरों के सुने भी जाएं :

जब लगु दुनीआ रहीऐ नानक किछु सुणीऐ किछु कहीऐ ॥
भालि रहे हम रहणु न पाइआ जीवतिआ मरि रहीऐ ॥ (पन्ना ६६१)

जब हम विश्व स्तर पर मानवीय भाईचारे की समानता तथा अनेकता में एकता के विचारों को ग्रहण कर लेंगे तो हमें उन बुनियादी गुणों की तरफ ध्यान देने की ज़रूरत पड़ेगी, जो इस तरह के मानवीय भाईचारे की स्थापना के लिए ज़रूरी हैं। इन शुभ गुणों व साधनों को श्री गुरु ग्रंथ साहिब में शक्तिशाली ढंग से प्रकट किया गया है। सब मनुष्य शांति चाहते हैं परंतु यह तभी आ सकती है अगर दिलों में मेल-मिलाप की भावना आए। वैर कभी भी वैर को शांत नहीं करता; आग कभी आग को बुझा नहीं सकती। वैर-विरोध पर निश्चित और यकीनन जीत क्षमा द्वारा ही संभव है। क्षिमा व सहनशीलता के गुणों के बिना मेल-मिलाप तथा आपसी प्रेम के बारे में सोचा नहीं जा सकता। आज के युग की स्थिति में ऐसे निर्मल विचार मानवता को आदर्श दिशा प्रदान करेंगे :

फरीदा बुरे दा भला करि गुसा मनि न हढाइ ॥
देही रोगु न लगई पलै सभु किछु पाइ ॥
(पन्ना १३८२)

श्री गुरु ग्रंथ साहिब सब किस्म के भेदभाव दूर करके, एक-दूसरे का दिल से भला मांगते हुए सारी मानवता को एकजुट होने का संदेश देते हैं :

बाबा आवहु भाईहो गलि मिलह मिलि मिलि देह आसीसा हे ॥
बाबा सचड़ा मेलु न चुकई प्रीतम कीआ देह असीसा हे ॥ (पन्ना ५८२)

श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी की बाणी में मानवीय एकता का एक अनमोल सूत्र इस तरह बताया गया है :

हम नही चंगे बुरा नही कोइ ॥ .
प्रणवति नानकु तारे सोइ ॥ (पन्ना ७२८)

श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी की बाणी हमें बताती है कि सारी सृष्टि का सृजक तथा सब का सांझा पिता परमात्मा एक ही है। सारे संसार की मिट्टी एक ही है। कुम्हार के मिट्टी को गूंथकर अलग-अलग बर्तन, अलग-अलग ढंगों द्वारा तराशने की भांति परमात्मा ने रंग, रूप तथा सूरतों की विभिन्नता प्रकट की है। सारे शरीर पांच तत्वों के सुमेल से ही बने हैं और इन तत्वों का सृजक वह परमात्मा खुद है। इसी लिए गुरबाणी की मूल भावना सभी मनुष्यों को मित्र जानने वाली और सबके सज्जन होने वाली है। कोई राम बोले या अल्लाह इससे क्या फर्क पड़ता है?

कोई बोलै राम राम कोई खुदाइ ॥
कोई सेवै गुसईआ कोई अलाहि ॥ (पन्ना ८८५)

चाहे अवगुण आदि काल से मनुष्य मात्र के साथ चले आ रहे हैं किंतु आधुनिक युग-स्थिति में अवगुणों का घटनाक्रम चल रहा है। यह रिकार्ड-तोड़ है। गुरबाणी बताती है कि पूरे विश्व की खुशहाली तथा समृद्धि के गुणों का आदान-प्रदान ज़रूरी है। असल में सांझीवालता का सूत्र ही मानवीय जीवन-मूल्यों के प्रति जागरूकता है। गुणों की महक से ही संसार का वातावरण निर्मल हो सकता है। गुणों की सांझ को मानवीय विकास का मूल मानने से जगत में निंदा-चुगली का अभाव होगा तथा प्रशंसा का सुखद वातावरण निर्मित हो सकेगा, जहां लोग अपनी महिमा नहीं बल्कि दूसरों की प्रशंसा करते दिखाई देंगे :

गुणा का होवै वासुला कढि वासु लईजै ॥
जे गुण होवनि् साजना मिलि साझ करीजै ॥
साझ करीजै गुणह केरी छोडि अवगण चलीऐ ॥
पहिरे पटंबर करि अडंबर आपणा पिड़ु मलीऐ ॥
जिथै जाइ बहीऐ भला कहीऐ झोलि अंम्रितु पीजै ॥
गुणा का होवै वासुला कढि वासु लईजै ॥
(पन्ना ७६५)

श्री गुरु ग्रंथ साहिब की निर्मल बाणी वैर-भाव तथा ईर्ष्या-द्वैत में फंसे मनुष्यों को उनके अज्ञानता भरे भ्रम-जाल से मुक्त करती है। इस बाणी में समूचे विश्व के जीवों, मनुष्यों, जानवरों व पक्षियों, वनस्पति, जंगल, मैदानों पर्वतों, सूर्य, चांद, तारे, आकाश, सागर, झीलों, नदियों आदि का वर्णन सामूहिक रूप में ही हुआ है। अगर किसी खास जगह या क्षेत्र का वर्णन हुआ भी है तो, जैसे बारह माहा तुखारी में 'माझ की वार' में, वहां भी मूल सरोकार विश्व-भाईचारे के प्रति प्यार-भाव गैरहाज़िर नहीं। पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी अपनी बाणी में फरमान करते हैं :

एकु पिता एकस के हम बारिक तू मेरा गुर हाई ॥ (पन्ना ६११)

श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी की विचारधारा समाज में से ऊंच-नीच तथा बेइंसाफी दूर करके एक सामाजिक भाईचारा स्थापित करने का मार्ग दर्शाती है। इसमें वर्ण-विभाजन, जात-पात, छूआ-छूत, जो आज के भी असंख्य घटमाक्रम बने दिखाई देते हैं तथा आर्थिक असमान विभाजन एवं पैसे की लूट-खसूट का सख़्त खंडन किया गया है। गुरु जी ने हक की सच्ची-सुच्ची किरत करना तथा बांटकर छकना को उत्तम माना है :

घालि खाइ किछु हथहु देइ ॥
नानक राहु पछाणहि सेइ ॥ (पन्ना १२४५)

जात-पात, ऊंच-नीच, रंग-रूप, नसल, लिंग आदि के भेदभाव आपसी प्रेम-प्यार की जड़ों को खोखला करते हैं जिस कारण संसार में शुरू से ही लड़ाई-झगड़े व दंगे-फसाद होते आए हैं। इस आपसी नफ़रत से उन बेकसूर

तथा मासूम ज़िंदगियों की गिनती नहीं की जा सकती जो इसकी भेंट चढ़ गए हैं। इस सम्बंधी गुरबाणी का उपदेश या लक्ष्य बहुत स्पष्ट है :

जाणहु जोति न पूछहु जाती आगै जाति न हे ॥
(पन्ना ३४९)

वास्तव में प्राणी की वही जाति है जिस तरह के वह कर्म करता है :

सा जाति सा पति है जेहे करम कमाइ ॥
(पन्ना १३३०)

संसार में कहीं अमीरी है और कहीं गरीबी। गुरबाणी इस असमानता की निंदा करती है तथा यह संदेश देती है कि सभी इंसान भाई-भाई हैं :

निरधनु सरधनु दोनउ भाई ॥
प्रभ की कला न मेटी जाई ॥ (पन्ना ११५९)

गुरबाणी में जात-पात, वर्ण-विभाजन तथा ऊंच-नीच का खंडन करके मनुष्य को एक ही भाईचारे का व्यक्ति तथा एक ही ज्योति से पैदा हुआ माना है :

अवलि अलह नूरु उपाइआ कुदरति के सभ बंदे ॥
एक नूर ते सभु जगु उपजिआ कउन भले को मंदे ॥ (पन्ना १३४९)

स्वास्थ्य विज्ञान के क्षेत्र में भी गुरबाणी मनुष्य को सही दिशा देती है। शरीर के बहुत सारे रोग काम व क्रोध आदि विकारों से ही उत्पन्न होते हैं। गुरबाणी में इन दोनों विकारों को स्वास्थ्य के लिए नुकसानदायक बताया गया है :

कामु क्रोध काइआ कउ गालै ॥
जिउ कंचन सोहागा ढालै ॥ (पन्ना ९३२)

आज राष्ट्रवाद एक राजनीतिक हथियार बनकर रह गया है। यह दलील दी जा सकती है कि किसी मुल्क के विकास के लिए इस राजनीतिक हथियार का होना आवश्यक है। संभव है कि विकास के प्रसंग में किसी मुल्क को इसका लाभ भी हुआ हो परंतु आज की दुनिया के नक्शे पर अगर दृष्टि डालें तो यह बात सत्य प्रतीत नहीं होती। दुनिया इस समय ज़ाहिर तौर पर परस्पर लड़ाई में उलझी पड़ी है। निश्चित ही किसी मुल्क को राष्ट्रवादी भावना का विकास कोई मदद नहीं दे रहा। हर मुल्क में राष्ट्र की परिभाषा पर झगड़े पैदा हो गए हैं तथा वो आपस में लड़ रहे हैं। एक मुल्क दूसरे मुल्क के साथ तथा एक नसल दूसरी नसल के साथ राष्ट्र के नाम पर लड़ रही है। इसी तरह राष्ट्र का सिद्धांत भी एक राजनीतिक हथकंडा बन गया है। सिर्फ दूसरे लोगों को अपने विरोध में तकड़ा होने से रोकने के लिए ही नहीं बल्कि अपने लोगों को कमज़ोर करने या हराने के लिए भी प्रयोग किया जाता है। किसी आदमी के साथ या किसी धर्म या एक संप्रदाय के लोगों से ज्यादतियों के बारे में सरकार इस आधार पर स्वीकार नहीं करती कि यह उनका अंदरूनी मामला है तथा बेगानी नज़रों में यह बात किसी को ठीक प्रतीत हो सकती है, परंतु व्यवहार में यह गलत है। एक मनुष्य जब दुख की घोर अवस्था में चीखता-पुकारता है तो वह चीख-पुकार ब्रह्मांड में बसते हर जीव पर असर डालती है। इसी तरह खुशी की एक लहर ब्रह्मंड में बसते हर जीव को प्रभावित करती है। इस प्रकार एक मनुष्य का दुख या सुख सृष्टि में बसते हर मनुष्य से ताल्लुक रखता है। गुरु साहिब तो यह भी मानते हैं कि मनुष्य का दुख ईश्वर को भी हिला देता है। अगर यह बात है तो हमें राष्ट्रवाद की परिभाषा ठीक करनी पड़ेगी। राष्ट्रवाद की जो परिभाषा श्री गुरु ग्रंथ साहिब में प्राप्त होती है वह निश्चित ही आज के प्रचलित राष्ट्रवाद के संकल्प से बेहतर है। नसल के, धर्म के, सभ्याचार के भेद हैं। इस

दृष्टि में यह विभिन्नता ईश्वर या कुदरत की क्रियाशीलता का हिस्सा है। इसके साथ मनुष्य की बुनियादी स्थिति में अंतर नहीं आता। एक ही आत्मा का प्रज्वलित होना, उन्हीं पांच तत्वों का बना हुआ होना, एक ही तरह से ज्ञान तथा कर्मेंद्रियों द्वारा व्यवहार करना सारी मानवता के एक होने का प्रमाण है तथा यह बुनियादी बात है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी को इसका मॉडल स्वीकार करके बात को आगे बढ़ाना पड़ेगा। सारी हदें तोड़कर मनुष्य मात्र को एक राष्ट्र तसलीम करना पड़ेगा। इस प्रकार मानवता का पिता एक है, सारी मानवता उस एक पिता की ही औलाद है।

गुरसिक्ख ने ऐसा जीवन जीना है कि उसने किसी को डर नहीं देना और किसी के डर में रहना नहीं। श्री गुरु तेग बहादर साहिब जी ने लगभग तीन सदियां पहले ही यह उपदेश दिया था :

भै काहू कउ देत नहि नहि भै मानत आन ॥
कहु नानक सुनि रे मना गिआनी ताहि बखानि ॥
(पन्ना १४२७)

श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी में जिस तरह मनुष्य-मात्र को एक राष्ट्र के रूप में संकल्पित किया गया है, ऐसे राष्ट्र को शक्तिशाली आधार देने के लिए कुछ नियम बनाए गए हैं। ये नियम इस तरह हैं :

--हकु पराइआ नानका उसु सूअर उसु गाइ ॥
(पन्ना १४१)
--सभे साझीवाल सदाइनि तूं किसै न दिसहि बाहरा जीउ ॥ (पन्ना ९७)
--जे जीवै पति लथी जाइ ॥
सभु हरामु जेता किछु खाइ ॥ (पन्ना १४२)

उपरोक्त नियमों को मानवीय ज़िंदगी का आधार बना लिया जाए तो एक सांझे, भय-रहित, क्रियाशील तथा पूर्ण सम्मान को प्राप्त राष्ट्र का निर्माण किया जा सकता है। अगर श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी में अंकित ऊंचे व शुद्ध मानवतावादी जीवन-मूल्यों को अपना लिया जाए तो एक आदर्श राष्ट्र का निर्माण हो सकता है। इस राष्ट्र का वजूद किसी वर्ग-विभाजन, हदबंदी या रंग-रूप के भेद का मुहताज नहीं होगा। भविष्यकालीन राष्ट्र का निर्माण इन जीवन-मूल्यों पर ही हो सकता है।

राजनीतिक क्षेत्र में भी गुरबाणी मानवता की सही अगुआई करती है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में एक हलेमी (आदर्श) राज्य की स्थापित्ति का संकल्प दिया गया है। इसमें अच्छा राजा उसको प्रवान किया गया है जो मनमर्जी नहीं करता, लोगों की सहमति से राज्य चलाता है तथा गुणों से भरपूर है :

राजा तखति टिकै गुणी भै पंचाइण रतु ॥
(पन्ना ९९२)

मानवतावादी सरोकारों की सफलता के लिए उचित राजनीतिक व्यवस्था आवश्यक है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी में राजनीतिक व्यवस्था की कमियों तथा राज्य-सत्ता के मानवतावादी उद्देश्यों की समुचित व्याख्या उपलब्ध है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब उस राज्य-प्रबंध के समर्थक हैं, जिसमें अमन व स्थिरता का वातावरण हो, राज्य-तंत्र का काम लड़ाई-झगड़े नहीं है :

राजे ओइ न आखीअहि भिड़ि मरहि फिरि जूनी पाहि ॥ (पन्ना ५९०)

राज्य-सत्ता का काम केवल लोगों से टैक्स उगराहकर सरकारी खज़ाने भरना व शासकों की एशो-इशरत का प्रबंध करना नहीं है :

दरबु संचि संचि राजे मूए गडि ले कंचन भारी ॥
(पन्ना ६५४)

श्री गुरु ग्रंथ साहिब की ईश्वरीय बाणी

स्पष्ट कथन करती है कि वे शासक ज़रूर मारे जाएंगे जो केवल अपने सुखों के प्रबंध में लगे रहेंगे :

नरपति राजे रंग रस माणहि बिनु नावै पकड़ि खड़े सभि कलघा ॥ (पन्ना ७३१)

जहां राज्य-सत्ता प्रजा में एकता न स्थापित कर सके, जहां एक तरफ प्रजा में आपसी मतभेद हों तथा दूसरी तरफ राज्य-सत्ता व प्रजा में दूरी हो, वहां राजनीतिक व्यवस्था स्थाई नहीं हो सकती, अस्थिरता का विनाशकारी वातावरण बन जाता है। एकता की जड़ें मज़बूत किए बिना राज्य अपने लक्ष्य में नाकाम है :

रईअति राजे दुरमति दोई ॥
बिनु सतिगुर सेवे एकु न होई ॥
एकु धिआइनि सदा सुखु पाइनि निहचलु राजु तिनाहा हे ॥ (पन्ना १०५७)

इसी लिए राज-सिंहासन पर वही व्यक्ति सुशोभित होने का हकदार है, जो सत्य का अनुसरण करता हो व भेदभाव (दूजै भाइ) से ऊपर उठकर सबके साथ न्याय करने के अपने मूल कर्त्तव्य की पूर्ति दृढ़ता से कर सके :

--तखति राजा सो बहै जि तखतै लाइक होई ॥
जिनी सचु पछाणिआ सचु राजे सेई ॥
एहि भूपति राजे न आखीअहि दूजै भाइ दुखु होई ॥ (पन्ना १०८८)
--राजे चुली निआव की पड़िआ सचु धिआनु ॥ (पन्ना १२४०)

श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के बाणीकारों ने पंजाब के सामाजिक, सभ्याचारक तथा धार्मिक मुखड़े को निखारने के लिए महत्त्वपूर्ण योगदान डाला। इसके बाणीकारों ने पंजाबी आचरण में उन जीवन-मूल्यों को परिपक्व किया, जो जीवन को मीठा, प्यारा व रौशन बनाते हैं। गुरबाणी-दर्शन ने धार्मिक सद्भावना तथा विश्व भाईचारे के संदेश को प्रफुल्लित करने में अमिट योगदान डाला है। सांझीवालता, सद्भावना तथा भाईचारे की इससे उच्च मिसाल अन्य क्या हो सकती है कि सिक्ख धर्म की रोज़ाना अरदास में सरबत्त के भले की मंगल-कामना की जाती है :

नानक नाम चढ़दी कला।
तेरे भाणे सरबत्त दा भला।

इस युग में चाहे मनुष्य अपने आपके लिए सभ्यक होने का दावा कर रहा है किंतु आज मनुष्य द्वारा खुद खड़ी की मुश्किलें उसके आगे मुंह आड़े खड़ी हैं। आज के आधुनिक युग में स्त्री को जन्म लेने से पहले ही मारने की प्रथा ने इस धरती पर घोर अनष्ट का घटनाक्रम बनाया हुआ है। मनुष्य को ज़िंदगी दान देने वाले व्यवसाय वाले डॉक्टर इन अधखिली कलियों के कातिल बने हुए हैं। इसने दुनिया के आगे बहुत बड़ी मुसीबत खड़ी कर दी है जिस कारण स्त्रियों की संख्या पुरुषों से कम होती जा रही है, जो दुनिया के विनाश की तरफ बढ़ रहा कदम है। इसमें जितना दोष मर्द का है स्त्रियों का भी दोष उनसे कम नहीं है। आधुनिक फैशन की दौड़ में जहां लोगों के पास पैसा बढ़ रहा है वहां उनकी स्त्रियों के तन से कपड़ा कम हो रहा है। अपनी पोशाक के कारण खुद ही स्त्रियां अपने लिए मुसीबतें खड़ी कर रही हैं जिसकी ख़बरें नित्यप्रति अख़बारों में नशर होती देखी जा सकती हैं। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में सारे संसार के मनुष्य के लिए पहरावे के प्रति चेतन करते हुए कहा गया है :

रता पैनणु मनु रता सुपेदी सतु दानु ॥
नीली सिआही कदा करणी पहिरणु पैर धिआनु ॥
कमरबंदु संतोख का धनु जोबनु तेरा नामु ॥२॥
बाबा होरु पैनणु खुसी खुआरु ॥
जितु पैधै तनु पीड़ीऐ मन महि चलहि विकार ॥ (पन्ना १६)

श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी में स्त्रियों को मर्दों के समान समझा गया है। स्त्री-पुरुष दोनों ही एक-दूसरे के पूरक हैं, मिलकर समाज की उत्पत्ति व विकास करते हैं :

ठाकुरु एकु सबाई नारि ॥ *(पन्ना ९३३)*

श्री गुरु अमरदास जी ने श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी की बाणी में स्त्रियों के गुणों की प्रशंसा करते हुए कहा है :

गिआन अपारु सीगारु है सोभावंती नारि ॥
सा सभराई सुंदरी पिर कै हेति पिआरि ॥
(पन्ना ४२६)

चाहे सती की रस्म हिंदू समाज से बहुत हद तक खत्म हो चुकी है परंतु हिंदू विधवायों की वास्तविक हालत आज भी बेहद करुणामयी है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी में दर्ज भक्त कबीर जी की बाणी में भक्त जी स्त्री को सती होने हेतु मज़बूर करने वाले वर्ग को समझाते हुए कहते हैं :

बिनु सत सती होइ कैसे नारि ॥
पंडित देखहु रिदै बीचारि ॥ *(पन्ना ३२८)*

आज जहां स्त्री का महत्त्व माने जाना शुरू हुआ है वहां उसको समाज में बनता स्थान लेने के लिए संघर्ष करना पड़ रहा है। पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी ने श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी में दर्ज अपनी बाणी में स्त्री की प्रशंसा करते हुए कहा है :

निज भगती सीलवंती नारि ॥
रूपि अनूप पूरी आचारि ॥
जितु ग्रिहि वसै सो ग्रिहु सोभावंता ॥
गुरमुखि पाई किनै विरलै जंता ॥ *(पन्ना ३७०)*

जहां श्री गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज बाणी में मनुष्य को स्त्री का सम्मान करने की प्रेरणा की गयी है वहीं स्त्री को अच्छी ग्रहणी बनने के लिए भरपूर शिक्षा दी गयी है, यहां तक कि गुरु साहिबान ने अपने आपको स्त्री रूप में कल्पकर प्रभु-परमात्मा को पति मानकर उसकी आराधना की है।

गुरबाणी किसी एक नसल, एक जाति तक सीमित नहीं। इसकी विशालता के घेरे में पूरी प्रकृति है। इस प्रकृति में असंख्य जीव-जंतु हैं। उनके कई प्रकार के रूप-रंग हैं, कई जातियां है, कई श्रेणियां हैं। सबका दातार परमात्मा है। उसकी कृपा के पात्र कुछ ही लोग नहीं, बल्कि विशाल जीव-समुदाय उसी की बख़्शिश के आश्रय में हैं :

केतीआ तेरीआ कुदरती केवड तेरी दाति ॥
केते तेरे जीअ जंत सिफति करहि दिनु राति ॥
केते तेरे रूप रंग केते जाति अजाति ॥
(पन्ना १८)

जिस प्रभु ने प्रकृति को साजा है, उसने अनेकों रूपों में तथा बहुत सारी नसलों में इसको सुंदर स्वरूप देने के लिए विभाजित किया है :

रंगी रंगी भाती करि करि जिनसी माइआ जिनि उपाई ॥ *(पन्ना ६)*

श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के अनुसार न केवल परमेश्वर ने नाना रूपों वाली खूबसूरत प्रकृति बनाई है, बल्कि ये बेअंत रूप व बेअंत नाम उसी के हैं :

तेरे नाम अनेका रूप अनंता कहणु न जाही तेरे गुण केते ॥ *(पन्ना ३५८)*

समय-समय पर इन परिस्थितियों पर कुछ सूझवान विद्वान विचार-चर्चा करते आए हैं। उन्होंने मनुष्य को प्रेरणा देने हेतु बहुत सारा साहित्य भी रचा, किंतु यह साहित्य उस समय के अनुसारी नहीं था या इस तरह कह लिया जाए कि वह पूरी दुनिया को दिशा देने की सामर्थ्य नहीं रखता था। इसका एक बड़ा कारण यह था कि वह साहित्य किसी एक वर्ग

से सम्बंधित किसी एक विद्वान द्वारा लिखा या लिखवाया गया था जिसमें उस वर्ग या भाईचारे की ही बात ज्यादा की गयी थी।

आज संसार को दिशा देने हेतु दुनिया के बड़े-बड़े चिंतकों के सामने एक ही साधन है, वह है-- श्री गुरु ग्रंथ साहिब, जो पूरी दुनिया, सभी भाईचारों, सारे वर्गों को हर प्रकार की दिशा देने की सामर्थ्य रखता है।

आज संसार की एक और बड़ी समस्या, जिससे समाज जूझ रहा है, वह है नशा। नशा भी आधुनिक युग की तकनीकों से लैस होकर नये-नये तरीके पेश कर रहा है। नशे की दलदल में फंसे मनुष्य इस धरती के लिए बड़ी समस्या पैदा कर रहे हैं। नशे की पूर्ति के लिए ये बड़े से बड़े जुल्म कर रहे हैं। श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी की बाणी में मनुष्य को हमेशा नशो से दूर रहने की प्रेरणा की गयी है :

--इतु मदि पीतै नानका बहुते खटीअहि बिकार ॥
(पन्ना ५५३)

--माणसु भरिआ आणिआ माणसु भरिआ आइ ॥
जितु पीतै मति दूरि होइ बरलु पवै विचि आइ ॥
आपणा पराइआ न पछाणई खसमहु धके खाइ ॥
जितु पीतै खसमु विसरै दरगह मिलै सजाइ ॥
झूठा मदु मूलि न पीचई जे का पारि वसाइ ॥
(पन्ना ५५४)

यातायात के साधन बढ़ जाने के कारण सारा संसार एक गांव का रूप धारण कर चुका है जिस कारण एक सभ्यता की दूसरी सभ्यता से जान-पहचान हुई है। इसका असर यही होना चाहिए था कि दुनिया में बसते जीवों का एक-दूसरे से प्यार गहरा होता परंतु मनुष्य की इच्छाओं ने इसके उल्ट असर ही डाला है। जहां प्राचीन समय में मानव-साधनों के अभाव के कारण एक-दूसरे से दूर थे परंतु उनमें एक-दूसरे के प्रति प्यार था। आज मनुष्य एक परिवार में, एक घर में रहता हुआ भी एक-दूसरे से दूर है। हर कोई सिर्फ अपने लिए ही जी रहा है।

ग्लोबल विलेज़ के संकल्प का विषय भी श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी की बाणी में अंकित है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में पूरे विश्व को एक शहर तथा धरती पर बसते हर इंसान को इस शहर में निवास करने वाला शहरी कहा गया है। इन सभी हम-शहरियों में खूब मित्रता है। ऐसा ही एक विशाल वतन जिसमें लोग बेरोक-टोक जहां चाहे जा सकें। सबकी सांझी न्यायशील सरकार की ऐसी निष्पक्ष राजनीतिक व्यवस्था हो, जिसको बदलने की कभी ज़रूरत न पड़े। सारी धन-सम्पत्ति सबकी सांझी हो। व्यक्तिगत कब्ज़े न हों, जिस कारण किसी टैक्स या जुर्माने भरने की चिंता भी न हो। न कोई लालचवश पाप करे, न ही किसी को किसी का डर हो। सब एक-दूसरे को भाइयों के समान समझें, किसी दूसरे के विरुद्ध अपराध न करें। वहां सदा विकास एवं सबकी भलाई के काम होते हों। किसी शहरी का दूसरा या तीसरा दर्जा बिल्कुल न हो। एक अद्वितीय समानता का इतिहास सबके हृदय में बसता हो। ऐसे बसते विश्व रूप शहर की हर तरफ प्रसिद्धि होगी :

बेगम पुरा सहर को नाउ ॥
दूखु अंदोहु नही तिहि ठाउ ॥
नां तसवीस खिराजु न मालु ॥
खउफु न खता न तरसु जवालु ॥१॥
अब मोहि खूब वतन गह पाई ॥
ऊहां खैरि सदा मेरे भाई ॥१॥रहाउ॥
काइमु दाइमु सदा पातिसाही ॥
दोम न सेम एक सो आही ॥
आबादानु सदा मसहूर ॥

ऊहां गनी बसहि मामूर ॥२॥
तिउ तिउ सैल करहि जिउ भावै ॥
महरम महल न को अटकावै ॥
कहि रविदास खलास चमारा ॥
जो हम सहरी सु मीतु हमारा ॥ (पन्ना ३४५)

समाज का यह मॉडल श्री गुरु ग्रंथ साहिब में है। उसकी और कहीं भी मिसाल मिलनी मुश्किल है। ऐसी मानवतावादी विचारधारा दुर्लभ है। गुरु-काल में ऐसे व्यवहार का प्रकटावा हुआ था जिसमें समस्त भेदभाव को इस तरह नष्ट किया था कि युद्ध में भी दुश्मन को अपने जैसा इंसान समझकर उसकी टहल सेवा की ऐतिहासिक मिसालों ने जन्म लिया। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में यह भी समझाया गया है कि धरती वह देग है, जिसके गर्भ में बड़े बेअंत पदार्थ सारी इन्सानियत के सांझे हैं तथा सुखद कल्याणकारी वातावरण बनाने के लिए इन सर्वसांझे संसाधनों का प्रयोग सांझे तौर पर होना चाहिए :

खावहि खरचहि रलि मिलि भाई ॥
तोटि न आवै वधदो जाई ॥ (पन्ना १८६)

गुरबाणी एक ऐसा विश्वव्यापी वातावरण सृजित करना चाहती है, जहां *"सरब जीआ मिहरंमति"* के आदर्श की प्राप्ति ही परम उद्देश्य हो, जहां आपसी वैर-भाव का पूर्ण नाश, शत्रुता का अंत, दूरियों का आभाव हो जाए, सभी हमारे मित्र हो जाएं और हम सब के मित्र बन जाएं। बात क्या, सारा कुछ ब्रह्म रूप प्रतीत होने लग जाए :

ना को मेरा दुसमनु रहिआ ना हम किस के बैराई ॥
ब्रहमु पसारु पसारिओ भीतरि सतिगुर ते सोझी पाई ॥२॥
सभु को मीतु हम आपन कीना हम सभना के साजन ॥
दूरि पराइओ मन का बिरहा ता मेलु कीओ मेरै राजन ॥ (पन्ना ६७१)

माया के प्रभाव से मुक्त होने के लिए गुरबाणी में सहज का मार्ग दर्शाया गया है। माया से दूर भागने की जगह माया में रहते हुए सुरति करके निर्लेप रहने का सिद्धांत पेश किया गया है। गुरसिक्खों ने गृहस्थी होना है परंतु रसों-भोगों से अपने मन को निर्मल भी करना है; उसने साधारण जीवों की तरह विचरण करते हुए अपनी सुरति को ऊंचा करना है :

--विचे ग्रिह सदा रहै उदासी जिउ कमलु रहै विचि पाणी हे ॥ (पन्ना १०७०)
--जोगु न भगवी कपड़ी जोगु न मैले वेसि ॥ नानक घरि बैठिआ जोगु पाईऐ सतिगुर कै उपदेसि ॥ (पन्ना १४२१)

इस तरह हम कह सकते हैं कि हमारी वर्तमान चेतना को सकारात्मक तथा सही दिशा में मोड़ने के लिए श्री गुरु ग्रंथ साहिब की सर्वकालीन तथा सर्वसांझी गुरबाणी भरपूर हिस्सा डाल सकती है। समूह दुनिया को इस अद्वितीय ग्रंथ के सर्वकल्याणकारी फलसफे के आश्रय में जितनी जल्दी लाया जा सके उतना ही बेहतर है। ऐसा करने से ही मानवता दुखी व भटकाव का शिकार नहीं रहेगी।



श्री गुरु ग्रंथ साहिब में मोक्ष की अवधारणा

*-डॉ. जगजीत कौर**

फल चतुष्टय--चार प्रकार के फल, *"चारि पदारथ जे को मागै"* की कामना में मानव धर्म, अर्थ, काम के साथ मोक्ष की भी कामना करता रहा है जिसे गुरमति के अनुसार 'मोख दुआर' अथवा मुक्ति माना गया है। आत्मिक सुख की चाह मनुष्य की सबसे बड़ी इच्छा-कामना रही है। आध्यात्मिक जिज्ञासु के लिए आवागमन, जन्म-मरण का चक्र अत्यंत दुखदायी रहा है। इस चक्र से मुक्ति की वह निरंतर कामना करता है। उसकी इस चाहना ने ही उसे परंपरा में चले आते अनेक विधि-विधान और आडंबरपूर्ण कर्मकांडी क्रियाओं में उलझाए रखा है और इसी के परिणामस्वरूप वह वर्तमान सामाजिक जीवन के दायित्वों का पूर्ण निर्वाह न कर अपने परमार्थ व पारलौकिक जीवन को सजाने-संवारने में ही अधिक लगा रहा है। प्रसिद्ध विचारक विद्वान गोपाल कृष्ण गोखले ने कहा था कि "भारतीय धर्म लोक जीवन के प्रति उतने सचेत नहीं हैं जितने कि परलोक जीवन को संवारने के उपक्रम में लगे रहते हैं। मोक्ष की प्राप्ति, मरने के बाद स्वर्ग की प्राप्ति, स्थायी सुख और प्रभु-चरणों में निवास की अदम्य कामना ही व्यक्ति को कर्मकांडी विपरवादी पाखंडों में उलझाती रही है। गुरमति ऐसे पाखंडी क्रिया-कलाप में नहीं उलझी। वह सच्चे, निष्काम, निष्कपट भाव से परमात्मा के साथ अनन्य प्रेम-सूत्र में बंधने को महत्त्व देती है :

राजु न चाहउ मुकति न चाहउ मनि प्रीति चरन कमलारे ॥ (पन्ना ५३४)

सामाजिक दायित्वों को निभाते हुए प्रभु-चरणों से निरंतर जुड़े मानव को सेवा-कार्यों में जुड़ इस शरीर में, इस मानव जन्म में ही विकारों से कामना, मनसा, संकल्पों-विकल्पों से मुक्त होना है, जिसे गुरबाणी जीवन-मुक्त बताती है। यह उस बैकुंठ व मोक्ष का विरोध करती है जो मरने के बाद प्राप्त होता है। मरणोपरांत बैकुंठ किस काम का?

गुर की साखी अंम्रित बाणी पीवत ही परवाणु भइआ ॥
दर दरसन का प्रीतमु होवै मुकति बैकुंठै करै किआ ॥ (पन्ना ३६०)

जीवन-मुक्त कौन है गुरबाणी के अनुसार?

जीवन मुकति सो आखीऐ मरि जीवै मरीआ ॥ (पन्ना ४४९)

वह जो जीते-जी मरता है :

आठ पहर प्रभु अपना धिआईऐ गुर प्रसादि भउ तरीऐ ॥
आपु तिआगि होईऐ सभ रेणा जीवतिआ इउ मरीऐ ॥ (पन्ना ७५०)

जीवन-मुक्त का स्वरूप निर्दिष्ट करते हुए पंचम गुरुदेव श्री गुरु अरजन देव जी फरमान करते हैं :

प्रभ की आगिआ आतम हितावै ॥
जीवन मुकति सोऊ कहावै ॥
तैसा हरखु तैसा उसु सोगु ॥
सदा अनंदु तह नही बिओगु ॥
तैसा सुवरनु तैसी उसु माटी ॥

***१८०१-सी, मिशन कम्पाऊंड, निकट सेंट मेरीज़ अकादमी, सहारनपुर (यू पी)-२४७००१, मो ९४१२४-८०२६६*

तैसा अंम्रितु तैसी बिखु खाटी ॥
तैसा मानु तैसा अभिमानु ॥
तैसा रंकु तैसा राजानु ॥
जो वरताए साई जुगति ॥
नानक ओहु पुरखु कहीऐ जीवन मुकति ॥
(पन्ना २७५)

श्री गुरु तेग बहादर साहिब जीवन-मुक्त जिज्ञासु के रूप-स्वरूप की व्याख्या करते हुए बताते हैं कि जिस जीव को स्तुति और निंदा का विचार नहीं होता, जिसके लिए लोहा और कंचन एक समान हैं, जिसे हर्ष-शोक की अनुभूति नहीं, जो शत्रु और मित्र को एक समान मानता है, शत्रु के साथ मित्र जैसा व्यवहार करता है, जिसने हउमै का त्याग कर दिया है, केवल करतार प्रभु में मन-चेतना से अवस्थित हो गया है, उसे ही जीवन-मुक्त माना जाता है :

उसतति निंदिआ नाहि जिहि कंचन लोह समानि ॥
कहु नानक सुनि रे मना मुकति ताहि तै जानि ॥४॥
हरखु सोगु जा कै नही बैरी मीत समानि ॥
कहु नानक सुनि रे मना मुकति ताहि तै जानि ॥५॥ . . .
जिहि प्रानी हउमै तजी करता रामु पछानि ॥
कहु नानक वहु मुकति नरु इह मन साची मानु ॥१९॥ (पन्ना १४२७)

जीवन-मुक्ति-प्राप्ति के मार्ग पर चलने के लिए जैसा गुरुदेव जी उपदेश कर रहे हैं उसके अनुसार कर्ता प्रभु को पहचानना प्रथम सोपान है। प्रभु को पहचानने के लिए हउमै का त्याग पहली शर्त है। दरअसल यह हउमै ही है जो मनुष्य को निजस्वरूप परमात्मा से अलग करती है अन्यथा जीव उस परमब्रह्म सत्य का ही अंश है :

हउमै एई बंधना फिरि फिरि जोनी पाइ ॥
(पन्ना ४६६)

हउमै के कारण मनुष्य अपने मूल स्वरूप से बिछुड़ जाता है। हउमै अविद्या है, अज्ञान है। हउमै में ग्रसित जीव इस नाशवान सत्ता के क्षणिक नाशमान पदार्थों को ही सत्य मान बैठता है; माया जनित पदार्थों में उलझ जाता है। धन-पदार्थ, सांसारिक आकर्षणों में फूला-फूला अहंकारी जीव सत्य सत्ता को भुला बैठता है। माया के प्रभाव से, माया के रजोगुण, तमोगुण और सतोगुण में भटकता अनेक विधि-कर्म करता है। यही कर्म ही उसका बंधन बन जाते हैं, जो उसे सत्य से दूर कर देते हैं। वह भूल जाता है कि उसका इस जगत में आने का उद्देश्य क्या था, मनोरथ क्या था :

भई परापति मानुख देहुरीआ ॥
गोबिंद मिलण की इह तेरी बरीआ ॥ (पन्ना २)

विस्मृति उसे भटका देती है। उस पर हउमै का दबाव रहता है। प्रभु-कृपा से यदि उसे सतिगुरु की प्राप्ति हो जाए तो गुरु अपने शबद-उपदेश द्वारा उसकी अविद्या को दूर कर देते हैं। धीरे-धीरे गुरु-उपदिष्ट मार्ग पर चलते हुए उसके कर्म-बंधन, हउमै के बंधन टूटने लगते हैं :

सो निहकरमी जो सबदु बीचारे ॥
अंतरि ततु गिआनि हउमै मारे ॥
नामु पदारथु नउ निधि पाए त्रै गुण मेटि समावणिआ ॥
हउमै करै निहकरमी न होवै ॥
गुर परसादी हउमै खोवै ॥
अंतरि बिबेकु सदा आपु वीचारे गुर सबदी गुण गावणिआ ॥ (पन्ना १२८)

गुरु-कृपा से ही हउमै का नाश होता है और हउमै का त्याग करके ही जिज्ञासु जीवन-मुक्त अवस्था-प्राप्ति की दिशा की ओर अग्रसर होता है :

जीवन मुकतु सो आखीऐ जिसु विचहु हउमै जाइ ॥ (पन्ना १००९)

गुरु की कृपा से ही वह निरंतर प्रभु-नाम-सिमरन करता है, प्रभु की भक्ति-साधना में लीन रहता है, प्रभु-शरण में आकर गुरु-शबद से जुड़कर भवजल से मुक्त होता है :

--जंमणु मरण न तिन्ह कउ जो हरि लड़ि लागे ॥
जीवत से परवाणु होए हरि कीरतनि जागे ॥
(पन्ना ३२२)

--एहा भगति जनु जीवत मरै ॥ गुर परसादी भवजलु तरै ॥ *(पन्ना ३६५)*

--गुर परसादी जीवत मरै मरि जीवै सबदु कमाइ ॥
मुकति दुआरा सोई पाए जि विचहु आपु गवाइ ॥
(पन्ना १२७६)

इस मुक्ति-द्वार की प्राप्ति के लिए यह भी आवश्यक बताया गया है कि मन को वश में रखा जाए, क्योंकि यह मन ही जीव को विविध विषयों में भटकाता रहता है। गुरबाणी इस मन को चंचल, मदमस्त हाथी, खोटे कर्मों में रचा, मनसा-वासना में रचा बताती है :

--कबीर मुकति दुआरा संकुरा राई दसवै भाइ ॥
मनु तउ मैगलु होइ रहिओ निकसो किउ कै जाइ ॥ *(पन्ना १३६७)*

--मन खुटहर तेरा नही बिसासु तू महा उदमादा *(पन्ना ८१५)*

खोटे मन को भी काबू करने का साधन गुरु-कृपा ही बताया गया है :

जनम जनम की इसु मन कउ मलु लागी काला होआ सिआहु ॥
खंनली धोती उजली न होवई जे सउ धोवणि पाहु ॥
गुर परसादी जीवतु मरै उलटी होवै मति बदलाहु ॥
नानक मैलु न लगई ना फिरि जोनी पाहु ॥१॥
(पन्ना ६५१)

गुरु-कृपा से ही गुरु-शबद, नाम-सिमरन में जुड़ जन्म-जन्मान्तरों से विविध योनियों में भटकते मन पर से विकारों की मैल दूर होती है, दुर्बुद्धि का नाश होता है, भ्रष्ट हुई विवेक बुद्धि में बदलाव आता है; जीते-जी इसी मानव शरीर में विकार शून्य हो मनुष्य मन को मारता है, वासना-कामना-मुक्त होता है। पुनः विकारों की मैल उस पर नहीं लगती। वह उस कर्म-नाश स्थिति पर पहुंचता है जहां कर्म करते हुए भी वह निष्कर्म होता है :

काहू फल की इछा नही बाछै ॥
केवल भगति कीरतन संगि राचै ॥(पन्ना २७४)

ऐसा निष्कर्म करता साधक ही जीवन-मुक्त होता है, परम शक्ति की एकता प्राप्त करता है :

सेवा करत होइ निहकामी ॥
तिस कउ होत परापति सुआमी ॥ (पन्ना २८६)

जीवन-मुक्त अवस्था पर पहुंचने के लिए साधक का प्रभु-हुक्म में चलना भी आवश्यक है। जीवन की प्रत्येक अवस्था को प्रभु का भाणा करके मानना जरूरी है। हुक्म के प्रति समर्पित होना है; *"तेरा कीआ मीठा लागै", "जो तुधु भावै साई भली कार"* करके स्वीकार करना है। हुक्म में विश्वास की आस्था को इतना प्रबल करके मानना है कि प्रत्येक पल हमारे कर्म प्रभु-इच्छा अनुसार ही हों। गुरुदेव जी का फरमान है :

जो किछु करै सु प्रभ कै रंगि ॥
सदा सदा बसै हरि संगि ॥
सहज सुभाई होवै हो होइ ॥
करणैहारु पछाणै सोइ ॥
प्रभ का कीआ जन मीठ लगाना ॥
जैसा सा तैसा द्रिसटाना ॥ *(पन्ना २८२)*

ऐसे प्रभु के हुक्म में चलकर प्रत्येक पल

प्रभु-नाम का पान करता हुआ गुरमुख चार पदार्थ, जिसमें मोक्ष पदार्थ भी निहित है, की प्राप्ति करता है; सदैव आत्मिक जीवन को प्राप्त करता हुआ जीवन-मुक्त हो जाता है :

साच पदारथु गुरमुखि लहहु ॥
प्रभ का भाणा सति करि सहहु ॥
जीवत जीवत जीवत रहहु ॥
राम रसाइणु नित उठि पीवहु ॥
हरि हरि हरि हरि रसना कहहु ॥१॥
(पन्ना ११३८)

ऐसा जीवन-मुक्त मनुष्य चिर सत्य को प्राप्त करने के लिए पर्वतों, जंगलों, पहाड़ों की गुफाओं में निवृत्त होकर नहीं रहता। वह समाज में विचरता है, अपने दायित्वों को पूर्ण करता है, *"घालि खाइ किछु हथु देइ"* वाली किरत करता है, वंड छकता है, दीन-दुखी-दर्दवंदों की सहायता करता है; *"ना को बैरी नही बिगाना"* वाले जीवन-सिद्धांत का पालन करता है; *"सो समदरसी तत का बेता"* होता है। वो समाज में गृहस्थी वेश में विचरण करता है। वो *"गिरसत महि चिंत उदास"* होता है। कर्म-क्षेत्र में ऐसे विचरता है :

जिउ जल महि कमलु अलिपतो वरतै तिउ विचे गिरह उदासु ॥ (पन्ना ९४९)

नाम-सिमरन के प्रकाश में विषय-वासनाओं से भरे जगत में वह उदास, निर्लिप्त रहता है। प्रभु, सतिगुरु की उस पर ऐसी अपार बख़्शिश होती है कि वह सांसारिक सम्बंधों के मध्य में ही परम आत्म अवस्था को प्राप्त हो जाता है :

सचि सिमरिऐ होवै परगासु ॥
ता ते बिखिआ महि रहै उदासु ॥
सतिगुर की ऐसी वडिआई ॥
पुत्र कलत्र विचे गति पाई ॥ (पन्ना ६६१)

सतिगुरु की कृपा से गुरमुख हंसते-खेलते, खाते-पीते सहज अवस्था में ही परम गति (मोक्ष) को प्राप्त होता है :

नानक सतिगुरि भेटिऐ पूरी होवै जुगति ॥
हसंदिआ खेलंदिआ पैनंदिआ खावंदिआ विचे होवै मुकति ॥ (पन्ना ५२२)

हंसते-खेलते जीवन-मुक्त मनुष्य केवल अपने निजी पारिवारिक दायित्वों को ही पूरा नहीं करता, आवश्यकता पड़ने पर वह मरजीवड़ा (जांबाज) देश, कौम, धर्म की रक्षा के लिए *"पुरजा पुरजा कटि मरै"* को भी तत्पर रहता है। ऐसे जीवन-मुक्त मरजीवड़ों ने ही सिक्ख इतिहास के स्वर्णिम पृष्ठों की सृजना की है। मौत को मज़ाक समझने वाले नाम-बाणी में रचे मरजीवड़ों ने ही *"पहिला मरणु कबूलि जीवण की छडि आस"* मान बंद-बंद कटाए हैं, 'चरखड़िओं पर चढ़े हैं, उबलते पानी की देगों में बैठे हैं। मरजीवी सिंघनियों ने बच्चों के टुकड़े कराकर गलों में हार पहने, मगर मुख से उफ न की। उन्होंने धर्म की रक्षा के लिए आत्म-बलिदान दिया है। वे चालीस मुकते, जिन्हें प्रात:-सायं अरदास में अपनी स्मृति में संजो हम श्रद्धापूर्वक नमन करते हैं, जीवन-मुक्त का आदर्श हैं। गुरबाणी का मोक्ष केवल अपने स्व-हितों तक ही सीमित नहीं है, गुरबाणी का मोक्ष अत्यंत विस्तृत पटल को अपने अंदर संजोकर रखे हुए है, जो हमारी प्रेरणा है, हमारा गौरव है, हमारा विरसा है और हमारी आगामी पीढ़ियों के लिए स्वर्ण-चिन्ह है, प्रकाश-स्तंभ है। ۞

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में मोक्ष सम्बंधी आए विचार

-स. गुरदीप सिंघ*

मोक्ष का अर्थ है-- बंधन से छुटकारा। सभी मजहबों में मोक्ष (मुक्ति) के विचार मिलते हैं। मनुष्य जन्म-मृत्यु से छुटकारा पाना चाहता है। एक विचार है कि आत्मा अविनाशी और बंधन रहित परमात्मा की अंश है, इसलिए जीव के अंदर से मोक्ष की इच्छा उत्पन्न होती है।

शास्त्रकारों ने शरीर को दुख रूप माना है, इसलिए इससे छुटकारे का नाम मोक्ष रखा है। बौद्धी मोक्ष को निर्वाण कहते हैं जो सभी इच्छाओं का त्याग कर आठ गुणों को धारण करने से मिलती है। एक तरह से निर्वाण समाप्ति का नाम है। जैन मत में अहिंसा और तप से जीवात्मा का ऊंचे लोगों में चले जाना मोक्ष है। मीमांसा वाले स्वर्ग में पहुंच जाने को मोक्ष कहते हैं। न्याय और विशेषक मत अपने गिने दुखों (शरीर, मन और इंद्रियों) के टूट जाने को मोक्ष कहते हैं। योग मत में सबीज-निरबीज समाधि (निरविकल्प समाधि) द्वारा पुरुष का अपने आप को ब्रह्म दृष्टिमान से अलग कर लेना मोक्ष है। वेदांत का अपने आप को ब्रह्म से अभेद जान लेना (ज्ञान द्वारा) मोक्ष है। चारवाकिए, जो रूह को मानते ही नहीं, देह का मर जाना ही मोक्ष मानते हैं। यहूदी, ईसाई, मुसलमान आदि के मतानुसार मोक्ष स्वर्ग की प्राप्ति है। एक दिन, जिसको वो कयामत कहते हैं, आयेगा। उस दिन मुर्दे कब्र में से फिर से जी उठेंगे और फिर सदा जीएंगे, ज़िंदा रहेंगे। बुरे व्यक्ति नरक में और अच्छे स्वर्ग में रहेंगे।

सिक्खी (गुरमति) आशयानुसार मुक्ति का अर्थ है--- जीवात्मा का परमात्मा की अनंत सत्ता में लीन होना। श्री गुरु अरजन देव जी ने उच्चारण किया है कि हे प्रभु! मैं राज नहीं मांगता, मोक्ष नहीं मांगता, मिहर कर, केवल तेरे चरणों का प्यार मेरे मन में समाया रहे। मुझे मालिक-प्रभु का दर्शन ही चाहिए, क्योंकि परमात्मा को पा लेना ही मुक्त होना है। इसलिए गुरु जी मुक्ति नहीं परमात्मा का नैकट्य मांगते हैं :

राजु न चाहउ मुकति न चाहउ मनि प्रीति चरन कमलारे ॥ (पन्ना ५३४)

श्री गुरु अमरदास जी मोक्ष के आदर्श के बारे में उच्चारण करते हैं कि वाहिगुरु, परमात्मा के साथ प्रेम हो जाना ही मुक्ति-मोक्ष है। जिस व्यक्ति की सुरति (लिव) वाहिगुरु, जो सदा स्थिर रहने वाला है, से लगी रहती है। ऐसे व्यक्तियों की आत्मिक अवस्था का बयान नहीं किया जा सकता। वही मुक्ति है :

सो जन मुकत जिस एक लिव लागी सदा रहै हरि नालै ॥ (पन्ना ७९६)

श्री गुरु रामदास जी उच्चारण करते हैं कि जिन व्यक्तियों ने हरि के नाम का सिमरन किया है, वे हमेश के लिए माया के बंधन से आज़ाद हो गए हैं। उनकी यम वाली फाही (यमों की फांसी) टूट गई है। उनकी कभी आत्मिक मौत नहीं होती। जिन लोगों ने सदा ही निर्भय प्रभु के नाम का सिमरन किया है,

*३०२, किदवाई नगर, लुधियाना-१४१००८; मो: ९८८८१२६६९०

प्रभु उनके सारे डर दूर कर देता है :
से मुकतु से मुकतु भए जिन हरि धिआइआ जी
तिन तूटी जम की फासी ॥ (पन्ना ११)

श्री गुरु नानक देव जी ने उच्चारण किया है कि यदि कोई प्रभु-नाम को हृदय में बसा ले तो वो मोक्ष का दर प्राप्त कर लेता है अर्थात् उसे ईश्वरीय ज्ञान हो जाता है, विवेक विचार मिल जाते हैं, जीव और ब्रह्म की एकता का ज्ञान हो जाता है, मिथ्या संसार का ज्ञान हो जाता है, संसार की असलियत का पता लग जाता है कि सब कुछ झूठ है, सब कुछ छोड़ कर चले जाना है। शरीर भी राख की ढेरी बन जाना है। जो इस असलियत को जान लेता है और प्रभु-नाम के साथ अपने आप को जोड़ लेता है वही अपना जीवन सफल बना लेता है :
मंनै पावहि मोखु दुआरु ॥ (पन्ना ३)

श्री गुरु अरजन देव जी उच्चारण करते हैं कि जो मनुष्य प्रभु की रजा को मन में मीठा करके मानता है वही जीवन-मुक्त कहलाता है। उसके लिए खुशी और गम एक जैसे हैं, क्योंकि उसके हृदय में प्रभु-चरणों का वियोग नहीं है। सोना और मिट्टी उसके लिए बराबर हैं। अमृत और विष भी उसके लिए बराबर हैं। गरीब और बादशाह उसकी नज़र में बराबर हैं। प्रभु जैसा करता है वही उसके जीवन का आदर्श मार्ग है। वह मनुष्य जीवित ही मुक्त कहा जा सकता है :
प्रभ की आगिआ आतम हितावै ॥
जीवन मुकति सोऊ कहावै ॥ (पन्ना २७५)

जीवन-मुक्त के लक्षण : जीवन-मुक्त जीव का अंत:करण कभी निराशा की ओर नहीं जाता। जीवन-मुक्त जीव जगत-रचना की सुंदरता के विस्माद-भाव में एक ऊंची और ठहराव वाली आनंद की अवस्था व्यतीत करता है। प्रेम ही मोक्ष का साधन है। वाहिगुरु के गुणों का सिमरन, वाहिगुरु के स्वरूप का चिंतन, इससे लगाव और फिर एकरस मेल, इस शरीर में रहते हुए जो इस प्रकार की अवस्था में है वह मुक्त है। उसे जीवन-मुक्त कहा गया है।

गुरमति के अनुसार मोक्ष से तात्पर्य संसार में माया के प्रभाव से आज़ाद रहना और चौथे पद की सहज अवस्था (जिसे तुरीआ अवस्था कहा गया है) में निवास करना है। जीवन-राह के खत्म होने पर परमात्मा में लीन होना, आवागमन के बंधनों को तोड़ना ही मोक्ष प्राप्त करना है।

श्री गुरु तेग बहादर साहिब उच्चारण करते हैं कि जो मनुष्य प्रभु-हुक्म में रहते हैं, खुशी और गम बराबर मानते हैं, जिनकी नज़र में दुश्मन कोई नहीं है, वे मुक्त हैं :
हरखु सोगु जा कै नही बैरी मीत समानि ॥
कहु नानक सुनि रे मना मुकति ताहि तै जानि ॥
(पन्ना १४२७)

मन की चार अवस्थाएं मानी गई हैं--- जागृत, सुप्त, सखोपत और तुरीआ। जागृत अवस्था में ज्ञान प्राप्त करने का सारा यंत्र काम कर रहा होता है। वस्तुओं का ज्ञान मन और इंद्रियों द्वारा प्राप्त हो रहा होता है। सुप्त अवस्था में इंद्रियां सो रही होती हैं, पर मन काम कर रहा होता है, इसलिए व्यक्ति मन की पकड़ में होता है। स्वप्न रहित नींद में मन और इंद्रियां दोनों सो रहे होते हैं। आत्मा का मिलाप परमात्मा से होता है, पर अस्थायी। चौथी अवस्था तुरीआ अवस्था है, जिसमें आत्मा का परमात्मा से मिलाप स्थायी रूप से हो जाता है। यह अवस्था प्रभु-नाम का जाप करने से मिलती है।

माया रहित अवस्था : जो व्यक्ति माया के तीन रूपों-- सतो, रजो, तमो से ऊपर उठ जाए

उसको चौथी-- तुरीआ अवस्था प्राप्त होती है। श्री गुरु नानक देव जी उच्चारण करते हैं कि वह मनुष्य परमात्मा का सेवक कहा जा सकता है जो संसार में रहकर अपना काम-धंधा करता हुआ माया के मोह से अछूता रहता है; माया-मोह से ऊपर उठकर अपने अहं भाव को दूर करता है। ऐसे सेवक के माया के बंधन टूट जाते हैं। माया से उसे मुक्ति मिल जाती है; तृष्णा की आग उसके अंदर से बुझ जाती है :

लाला सो जीवतु मरै मरि विचहु आपु गवाए ॥
बंधन तूटहि मुकति होई त्रिसना अगनि बुझाए ॥ *(पन्ना १०११)*

आत्मा और परमात्मा के बीच अहं (हउमै) तथा भौतिक तृष्णाओं की दीवार है। इसे तोड़कर ही आत्मा को परमात्मा के साथ एकसुर किया जा सकता है। सिक्खी का मोक्ष का संकल्प व्यक्तित्व को खत्म करना नहीं इसको विकसित करना है; जीवन को संतुलित बनाना है। आत्मा को इस संसार में पूर्ण जीवन व्यतीत करते हुए परमात्मा से मिलना है और इस लोक को छोड़कर परमात्मा में अभेद होने का आदर्श रखना है। प्रभु-नाम से अछूते और अहं-भाव से ग्रस्त व्यक्ति कभी भी मुक्ति नहीं पा सकते :

हउमै पैखड़ु तेरे मनै माहि ॥
हरि न चेतहि मूड़े मुकति जाहि ॥ *(पन्ना ११८९)*

श्री गुरु नानक देव जी ने उच्चारण किया है कि परमात्मा ने जीवों के अंदर हउमै रूपी ज़हर भरकर संसार पैदा कर दिया है। यह ज़हर तभी दूर हो सकता है जब जीव के हृदय में गुरु का शबद बस जाता है। वह ऊंची अवस्था में पहुंच जाता है। अपनी सुरति को परमात्मा से जोड़कर रखता है। अहं-भाव यदि जीवन से निकल जाए तो सांसारिक जीवन जीते हुए वह माया के बंधन से आज़ाद हो जाता है :

जीवन मुकतु सो आखीऐ जिसु विचहु हउमै जाइ ॥ *(पन्ना १००९-१०)*

आवागमन के चक्कर काटना : श्री गुरु नानक देव जी उच्चारण करते हैं कि जन्म और मृत्यु का चक्कर गुरु के शबद द्वारा ही मिटता है। गुरु-शबद में जुटे हुए व्यक्ति को प्रभु स्वयं ही पहचान लेते हैं और उस पर रहम करते हैं। जिनको सभी प्रकार के रसों का घर प्रभु का नाम भूल जाता है, उन्हें विषय-विकारों में फंसने के कारण हउमै की पीड़ा तंग करती है। यह भेद वही मनुष्य समझ सकता है जिसको स्वयं परमात्मा अपनी बख़्शिश करके बुद्धि देता है। गुरु-शबद में लीन होने के कारण वह जीव हउमै से आज़ाद हो जाता है। उसे तारणहार प्रभु स्वयं ही तार देता है :

सो बूझै जिसु बुझाए गुर कै सबदि सु मुकतु भइआ ॥ *(पन्ना ९४१)*

गुरबाणी में 'मुकता' (मुक्त) पद बहुअर्थी है, जिसका साधारण अर्थ है--- बंधनों से रहित, मुक्ति को प्राप्त हुआ, जन्म-मरण से रहित आदि। गुरमति में बहुत ऊंची आध्यात्मिक अवस्था में पहुंचे हुए परम पुरखों के लिए 'मुकता' पद का प्रयोग किया गया है। मुकता वह जो सांसारिक जीवन में विचरण करते हुए दुनियावी माया से निर्लेप और अंत:करण से अकाल पुरख के साथ लिप्त है। गुरबाणी में मुक्त/मुकता कौन है? इस सम्बंध में कहा गया है :

जिह घटि सिमरनु राम को सो नरु मुकता जानु ॥
तिहि नर हरि अंतरु नही नानक साची मानु ॥ *(पन्ना १४२८)*

गुरबाणी की शिक्षा मानवीय जीवन को संतुलित बनाती है। यह इंद्रियावी जीवन, प्यार,

(शेष पृष्ठ ४१ पर)

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में मानवीय सह-अस्तित्व के तत्व

*-स. सतविंदर सिंघ फूलपुर**

सह-अस्तित्व (Co-existence) का अर्थ है दूसरे के अस्तित्व को स्वीकार करना, विशेषत: उन लोगों के जिनका धर्म-विश्वास, भाषा एवं सभ्याचार हमारे से भिन्न हो। धर्मों के इतिहास में आदि काल से ही सह-अस्तित्व का अभाव रहा है :

वरना वरन न भावनी खहि खहि जलन बांस अंगिआरा । (वार १:१७)

आर्यों ने द्राविड़ों पर अनंत प्रकार से जुल्म किया और श्रमणक धर्म परंपराओं का दमन किया। उपनिषद काल में जब पुन: यह बुद्ध-जैन धर्म के रूप में अंकुरित हुआ तो सह-अस्तित्व का शिकार होकर इन्हें भारत से बाहर अपने पैर जमाने पड़े।[१] इसलाम के अनुयायियों ने दारुल-इसलाम का नारा लगाकर दूसरों को काफ़िर जान उन पर कई प्रकार से जुल्म किए। इस सब कुछ का मुख्य कारण दूसरे धर्मों के सिद्धांतों, विश्वासों के प्रति अज्ञानता में से प्रकट हुआ अहं प्रतीत होता है जो सिवाय अपने किसी अन्य के अस्तित्व को सहन करने के लिए तैयार नहीं होता।

आज विश्वीकरण के युग ने जहां भिन्न-भिन्न सभ्याचारों, धर्मों, विश्वासों के लोगों को आपस में इकट्ठा बैठने का अवसर प्रदान किया है वहीं इसके साथ-साथ एक-दूसरे की अवस्थाओं के प्रति सह-अस्तित्व की समस्या उसी तरह बरकरार है। इसके मुख्य कारण हैं-- अपने धर्म, अपने इष्ट, अपनी भाषा और अपनी आस्था को सर्वश्रेष्ठ जानकर अपने आप को दूसरों से अलग एवं विशेष समझना तथा दूसरों को निषिद्ध जानना; अपने देश के सभ्याचार को उत्तम समझकर विद्वेष-द्वेष (Xenophobia)[२] के कारण दूसरों से घृणा करना, एक ही धर्म के विभिन्न वर्गों द्वारा अपने आप को धर्म की वास्तविक शाखा समझकर दूसरे के अस्तित्व को अप्रवान करना[३] आदि इस प्रकार की रूढ़िवादी धारणाएं बहुप्रकारी आस्थाओं तथा बहुप्रकारी सभ्याचारक समाज के लिए खतरा बन जाती हैं।

सह-अस्तित्व की इन सारी समस्याओं का हल अनेकता में एकता को स्वीकार कर लेने से संभव हो सकता है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में सह-अस्तित्व के तत्व ढूंढने के लिए हम इसकी विचारधारा एवं बाहरी स्वरूप को आधार बनाएंगे। सह-अस्तित्व के लिए सबसे पहले परमात्मा के विभिन्न नामों के आधार पर बंटी हुई दुनिया में मानव-एकता का एहसास करवाने के लिए उनके अंदर इष्ट-एकता का भाव दृढ़ करवाना अति आवश्यक है, क्योंकि अपने-अपने धर्मों या वर्गों के अलग-अलग भगवानों या देवताओं को सर्वश्रेष्ठ व सर्वशक्तिमान समझने का अभिमान और दूसरों को हीन समझने की अज्ञानता ही धर्मों के आपसी तनाव तथा खून-खराबे का कारण बनती रही है। गुरबाणी में मनुष्य को यह निश्चय करवाया गया है कि परमात्मा एक है। लोग उसे राम, रहीम, खुदा, अल्लाह, गुसईयां, वाहिगुरु आदि विभिन्न नामों

**रीसर्च स्कालर, सिक्ख इतिहास रीसर्च बोर्ड, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर-१४३००६, मो ९९१४४-१९४८४*

से पुकारते हैं :

कोई बोलै राम राम कोई खुदाइ ॥
कोई सेवै गुसईआ कोई अलाहि ॥ (पन्ना ८८५)

मगर इन नामों में जो सांझा तत्व सारी मानवता को एकता के सूत्र में पिरोता है वो है परमात्मा के हुक्म की एकता। जो परमात्मा हुक्म की पहचान कर लेता है वो उसके भिन्न-भिन्न नामों को मानवता में विभाजन करने का कारण नहीं समझता, बल्कि उस हुक्म को मानने के भिन्न-भिन्न साधन समझकर सबका सम्मान करता है :

कहु नानक जिनि हुकमु पछाता ॥
प्रभ साहिब का तिनि भेदु जाता ॥ (पन्ना ८८५)

दूसरा, गुरबाणी में एक पिता का एहसास करवाकर भी अलग-अलग धर्मों के नाम पर बंटी हुई मानवता में भ्रातृ-भाव (सह-अस्तित्व) का एहसास जगाया गया है :

एकु पिता एकस के हम बारिक तू मेरा गुर हाई ॥ (पन्ना ६११)

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में एक स्थान पर मुसलमानों तथा हिंदुओं के धार्मिक विश्वासों के निशानों (मसजिद, मूर्ति, हज़, तीर्थ-यात्रा, रोज़े, व्रत) का ज़िक्र करते हुए बताया गया है कि हरि का निवास मनुष्य के निष्कपट हृदय में है और सारे गुरु, पीर सबके सांझे हैं :

अलहु एकु मसीति बसतु है अवरु मुलखु किसु केरा ॥ . . .
कबीरु पूंगरा राम अलह का सभ गुर पीर हमारे ॥ (पन्ना १३४९)

आज ऊंच-नीच, जात-पात, रंग-नस्ल का भेदभाव पूरे विश्व में सह-अस्तित्व के लिए खतरा बना हुआ है। गुरबाणी में इस जातीय भेद तथा रंग-भेद दोनों का बड़े वैज्ञानिक ढंग से तर्क आधारित समाधान करते हुए कहा गया है कि कोई ऊंचा या नीचा नहीं, कोई अच्छा या बुरा नहीं, सब एक ही परमात्मा द्वारा एक समान तत्वों से पैदा किए गए हैं :

फकड़ जाती फकड़ु नाउ ॥ सभना जीआ इका छाउ ॥ (पन्ना ८३)
माटी एक अनेक भांति करि साजी साजनहारै ॥
ना कछु पोच माटी के भांडे ना कछु पोच कुंभारै ॥ (पन्ना १३५०)

हां, किसी का रंग, रूप, भेस, अलग-अलग देशों के पवन-पानी या सभ्याचार के कारण भिन्न हो सकता है, मगर यह एक-दूसरे के प्रति घृणा या असहनशीलता का कारण नहीं बनना चाहिए, क्योंकि ज्योति सब में एक ही है, इसलिए राष्ट्रीय या मानववादी बनने के लिए निजत्व से ऊपर उठ कर सब जीवों में से स्वत्व (अपनापन) पहचानना पड़ेगा :

निआरे निआरे देसन के भेस को प्रभाउ है ॥ (दसम ग्रंथ)
अवलि अलह नूरु उपाइआ कुदरति के सभ बंदे ॥
एक नूर ते सभु जगु उपजिआ कउन भले को मंदे ॥ (पन्ना १३४९)
--नानक ता कउ मिलै वडाई आपु पछाणै सरब जीआ ॥ (पन्ना ९४०)
--ना को बैरी नही बिगाना सगल संगि हम कउ बनि आई ॥ (पन्ना १२९९)

इस समय सह-अस्तित्व की जो सबसे बड़ी तथा विश्वव्यापी समस्या सामने आ रही है वो है सैद्धांतिक असहनशीलता। प्रत्येक धर्म-समूह अपने धर्म के सिद्धांतों, अपनी मान्यताओं को सर्वश्रेष्ठ समझता है और दूसरों को नकारता है। गुरु साहिब जब मानवता को विषय-विकारों की अग्नि में जलता देखते हैं तो वे यह पुकार करते हैं कि हे परमेश्वर! इस जगत को बचा लो। विषय-विकारों की अग्नि में जल रहे जगत

को जिस भी मार्ग (धर्म) द्वारा बचाया जा सके, बचा लो :

जगतु जलंदा रखि लै आपणी किरपा धारि ॥
जितु दुआरै उबरै तितै लैहु उबारि ॥
(पन्ना ८५३)

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में दूसरे धर्म-ग्रंथों के अस्तित्व को भी पूरा सम्मान दिया गया है। गुरु साहिबान का उद्देश्य मनुष्यों में एक परम सत्य (हस्ती) का निश्चय दृढ़ करवाना है। इसके लिए परम सत्य की बात करने का एकाधिकार श्री गुरु ग्रंथ साहिब के पास न रखते हुए जिस धर्म-ग्रंथ में भी परमात्मा की बात आती है उसकी उदाहरणें देकर एक का निश्चय दृढ़ करवाया है। भक्त कबीर जी अपने एक शबद में एक योगी को संबोधित करते हुए कहते हैं कि हे योगी! चार वेद, छः शास्त्र, अठारह पुराण सब एक परमात्मा की बात कर रहे हैं, मगर तू दुविधापूर्ण कर्मों में फंसा हुआ एक का भेद नहीं समझ रहा :

चारि पुकारहि ना तू मानहि ॥
खटु भी एका बात वखानहि ॥
इस असटी मिलि एको कहिआ ॥
ता भी जोगी भेदु न लहिआ ॥ (पन्ना ८८६)

सुखमनी साहिब बाणी में पंडित को संबोधित किया गया है कि यदि तू वेद, पुराण और स्मृतियों के भाव को समझ ले तो तू सूक्ष्म (निर्गुण ब्रह्म) में स्थूल (सगुण ब्रह्म) के भेद को समझ सकता है :

बेद पुरान सिम्रिति बूझै मूल ॥
सूखम महि जानै असथूलु ॥ (पन्ना २७४)

बाबा फ़रीद जी की बाणी में प्रभु-बंदगी की बात करते हुए इसलामिक धर्म-विश्वासों-- वुज़ू, नमाज़, मसजिद आदि का पूर्ण सम्मान किया गया है :

उठु फरीदा उजू साजि सुबह निवाज गुजारि ॥
(पन्ना १३८५)

हमें यह जानकर गर्व महसूस होता है कि दुनिया के इतिहास में यह पहली बार हुआ है कि श्री गुरु ग्रंथ साहिब में दूसरे धर्म-विश्वासों में आस्था रखने वालों के अस्तित्व को स्वीकार करके उसे संवारने का काम किया गया है। उदाहरणस्वरूप मुसलमान से कहा गया है कि तुझे तेरा धर्म मुबारक है, मगर यदि तू सदाचारक गुणों का मालिक बन जाए तो धर्म ही तेरे लिए कल्याण का साधन है। यदि तू ब्राह्मण है तो ठीक है, मगर यदि तू अच्छे चरित्र का मालिक बन जाए तो पूजने योग्य हो जाए :

मुसलमाणु कहावणु मुसकलु जा होइ ता मुसलमाणु कहावै ॥ (पन्ना १४१)
--सो ब्रहमणु जो बिंदै ब्रहमु ॥
जपु तपु संजमु कमावै करमु ॥
सील संतोख का रखै धरमु ॥
बंधन तोड़ै होवै मुकतु ॥
सोई ब्रहमणु पूजण जुगतु ॥ (पन्ना १४११)

इसी तरह पंडितों, योगियों, सन्यासियों, वैष्णव, वैरागियों आदि में भ्रम या कोई कमी देखकर नफ़रत ज़ाहिर नहीं की बल्कि उनमें विद्यमान कमियों को दूर कर उन्हें आदर्श आचरण के धारक बनने की प्रेरणा की है। गुरु साहिबान का विचार यह था कि कोई मंज़िल के निकट पहुंच गया है, कोई अभी दूर है, मगर हैं सब एक ही पथ के पथिक, इसलिए उन्होंने सबको साथ लेकर आगे बढ़ने की प्रेरणा की है :

निरगुणु सरगुणु आपे सोई ॥
ततु पछाणै सो पंडितु होई ॥ (पन्ना १२८)
--सो जोगी जो जुगति पछाणै ॥
गुर परसादी एको जाणै ॥ (पन्ना ६६२)
--सो संनिआसी जो सतिगुर सेवै विचहु आपु

गवाए ॥ *(पन्ना १०१३)*
--बैसनो सो जिसु ऊपरि सुप्रसंन ॥
बिसन की माइआ ते होइ भिंन ॥ *(पन्ना २७४)*
--सिफती रता सद बैरागी जूऐ जनम न हारै ॥
कहु नानक सुणि भरथरि जोगी खीवा अंम्रित धारै ॥ *(पन्ना ३६०)*

लगभग हर देश में अलग-अलग धर्मों, भाषाओं, सभ्याचारों के लोग रहते हैं। आज विश्वीकरण के युग में समूह विश्व के गांव बन जाने के कारण आपसी सह-अस्तित्व की एक यह भी समस्या सामने आ रही है कि बहुधर्मी तथा बहुप्रकारी सभ्याचार वाले देशों में लोकतंत्र कैसा हो? इस समस्या का हल गुरबाणी में से ढूंढा जा सकता है :

राजे चुली निआव की पड़िआ सचु धिआनु ॥
(पन्ना १२४०)

देश की राजनीतिक प्रणाली जिस प्रकार की भी हो, राजा, जो कि देश का मुखिया है, उसका कर्त्तव्य है कि अपने निजी धर्म से ऊपर उठ कर अपनी प्रजा के साथ न्याय करे। न्याय कैसा भी हो-- धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक, सबके लिए एक समान हो। जिस देश का राजा ही अपने देश में (अल्पसंख्यक) लोगों की नसलकुशी (सर्वनाश) का कारण बन जाए वहां पर सह-अस्तित्व की कल्पना करना मुश्किल हो जाता है।

आज सभी कई धर्मों में दूसरे धर्मों के धार्मिक चिन्हों के प्रति घृणा का रवैया भी विश्व सह-अस्तित्व के लिए खतरा बना हुआ है। भारत में मुगल काल, अंग्रेज काल तथा सन् १९४७ के बाद भी सिक्खों के कृपाण पहनने पर पाबंदी लगाई जा रही है। फ्रांस में सिक्खों की दसतार का मामला भी इसी की कड़ी है। गुरबाणी में सच्चे मन से पहने किसी भी धार्मिक चिन्ह को न तो नकारा गया है और न ही किसी को उतारने के लिए कहा गया है। जहां कहीं इन चिन्हों की मूल भावना का अभाव देखा है वहां पर उसका विकल्प देकर उनकी सार्थक व्याख्या भी की है :

मुंदा संतोखु सरमु पतु झोली धिआन की करहि बिभूति ॥ *(पन्ना ६)*

दुनिया के इतिहास में यह भी पहली बार हुआ है कि किसी गुरु ने दूसरे धर्म के धार्मिक चिन्ह को बचाने (धर्म की आज़ादी) की खातिर अपने जीवन का बलिदान दे दिया हो :

तिलक जंञू राखा प्रभ ता का ॥
कीनो बडो कलू महि साका ॥ (बचित्र नाटक)

आज सभ्याचार का मामला विश्व के लिए सह-अस्तित्व का बड़ा खतरा बनता जा रहा है। विश्वीकरण हर प्रकार की भिन्नताओं को खत्म करके समानता लाना चाहता है, इसलिए विभिन्न सभ्याचारों को अपनी विलक्षण पहचान बनाए रखने का खतरा महसूस हो रहा है। इस खतरे में से उत्पन्न हुआ पश्चिमी एवं पूर्वी सभ्याचारों का टकराव विश्व-शांति के लिए खतरा बना हुआ है। इस समस्या का हल भी श्री गुरु ग्रंथ साहिब में से ही ढूंढा जा सकता है।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब के संपादन से दुनिया के इतिहास में यह पहली बार हुआ है कि एक ही धर्म-ग्रंथ में विभिन्न धर्मों, वर्णों, सभ्याचारों, भाषाओं के अस्तित्व को स्वीकार करते हुए सबके लिए सांझा उपदेश दृढ़ करवाया है। इसमें अलग-अलग आस्थाओं एवं भावनाओं का सम्मान करते हुए भारतीय समाज में सदियों से चले आ रहे धर्मों, वर्णों के झगड़ों का समाधान करके बिना ऊंच-नीच, जात-पात के सबको सांझी विरासत (परम सत्य की भक्ति) की मालिकी के भागीदार बनाया गया है। इसमें बिना किसी

धर्म, जात-पात, वर्ण, भाषा, प्रांत के भेदभाव के संतों महापुरुषों के रूहानी वचनों (बाणी) को दर्ज करके बराबर सम्मान के अधिकारी बनाया है। समय तथा स्थान के कारण ये बाणीकार १२वीं सदी से लेकर १७वीं सदी तक के भारत के अलग-अलग कोनों में बसने वाले थे। भाषा के पक्ष से देखें तो इसमें किसी एक भाषा को सर्वश्रेष्ठ तथा अन्य को हीन भाषाएं नहीं समझा गया। वो हर भाषा सम्माननीय है जिसके द्वारा मानवता के कल्याण के लिए परमात्मा का उपदेश दृढ़ करवाया जा सके, इसलिए इसमें अरबी, फारसी, हिंदी, सहसक्रिती तथा पंजाबी के लगभग सारे रूप देखने को मिलते हैं। रागों के सम्बंध में योगियों, सूफियों, गुज़रों के राग; भारत की उत्तरी एवं दक्षिणी पद्धतियों के राग शामिल हैं। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में जहां विचारधारा के पक्ष से सह-अस्तित्व के तत्व मौजूद हैं वहीं सिक्ख धर्म ने संगत-पंगत तथा गुरुद्वारा संस्थाओं द्वारा इसे व्यवहारिक रूप में भी पेश किया है। बहुत सारे धर्मों के ऐसे धर्म-स्थान भी हैं जहां केवल उसी धर्म के अनुयायी ही जा सकते हैं, मगर गुरुद्वारे में हर कोई बिना ऊंच-नीच, जात-पात, वर्ण-भेद, लिंग-भेद के संगत में बैठकर नाम-सिमरन कर सकता है; बिना किसी भेदभाव के एक ही पंगत में बैठकर लंगर छक सकता है।

आज सह-अस्तित्व के लिए एक बहुत ही खतरनाक एवं विश्वव्यापी समस्या सामने आ रही है जो किसी समय भयानक खून-खराबे का रूप भी धारण कर सकती है। कुछ जुनूनी स्वभाव वाले शरारती तत्वों द्वारा दूसरे धर्मों या संप्रदायों के अनुयायियों, धर्म-ग्रंथों या धर्म-विश्वासों के प्रति एतराजयोग्य टिप्पणियां करके लोगों की धार्मिक भावनाओं को भड़काकर देश, समाज का माहौल खराब करने की कोशिश की जाती है। उदाहरणस्वरूप मुहम्मद साहब का कार्टून बनाना, ईसा मसीह के हाथ में सिगरेट तथा जाम दिखाना, गुटखा (तंबाकू) के पैकेटों पर श्री गुरु नानक देव जी की तसवीर प्रकाशित करना आदि। इस सम्बंध में भी श्री गुरु ग्रंथ साहिब में मनुष्य को चेतावनी दी गई है कि सारे जीव एक परमात्मा के पैदा किए हैं, इसलिए किसी की भावनाओं को ठेस पहुंचाना अच्छी बात नहीं। हे मनुष्य! यदि तेरी प्रभु से मिलने की इच्छा है तो कभी भी किसी का दिल न दुखाना :

सभना मन माणिक ठाहणु मूलि मचांगवा ॥
जे तउ पिरीआ दी सिक हिआउ न ठाहे कही दा ॥ (पन्ना १३८४)

यदि कोई ऐसी हरकत करता भी है तो उसके उद्देश्य को असफल करने के लिए उकसाहट में आने की बजाय मिल-बैठकर बातचीत द्वारा मामले का हल ढूंढने की कोशिश करनी चाहिए :

होइ इकत्र मिलहु मेरे भाई दुबिधा दूरि करहु लिव लाइ ॥ (पन्ना ११८५)

सह-अस्तित्व को स्थापित करने के लिए धर्मों में पड़े भ्रमों को दूर करके दूसरों के आशय को समझने की तथा धर्म की व्यवहारिक रूह को जानने के लिए आंतरिक समझ अति आवश्यक है। आंतरिक समझ के लिए जहां अन्य कई ढंग संभव हो सकते हैं वहीं आंतरिक संवाद सबसे ज्यादा कारगर सिद्ध होकर नई रोशनी की किरण दिखा सकता है। इस सम्बंध में Dr. Hans Kung लिखते हैं-- "There will be no peace among the nations without peace among the religions. There will be no peace among the religions without dialogue among

the religions.

Dr. Hans Kung के इस कथन में श्री गुरु ग्रंथ साहिब में सह-अस्तित्व के लिए दर्शायी गई आंतरिक समझ तथा आंतरिक संवाद का तत्वसार समाया हुआ है। श्री गुरु नानक देव जी की एक पंक्ति *"जब लगु दुनीआ रहीऐ नानक किछु सुणीऐ किछु कहीऐ"* आंतरिक समझ एवं आंतिरक संवाद या केंद्रीय-धुरा मानी जा सकती है। इसमें एक विशेष नुक्ता ध्यान देने योग्य यह है कि आज चाहे धर्मों की बात ले लो, चाहे कोई अन्य मामला, हर मनुष्य अपनी बात बताने की कोशिश करता है, दूसरे की सुनने के लिए कोई तैयार नहीं। गुरु साहिब ने पहले दूसरे की बात (विचारधारा) सुनने और फिर अपनी बात कहने की बात की है। जिस दिन हमें दूसरे की बात सुनने की युक्ति आ गई उस दिन हम दूसरे के अस्तित्व को भी स्वीकार कर लेंगे। फिर देशों एवं धर्मों में जो सह-अस्तित्व की समस्या समूह विश्व के लिए खतरा बनी हुई है, उसके सार्थक परिणाम अवश्य सामने आएंगे।

सह-अस्तित्व का दूसरा नुक्ता यह है कि आंतरिक समझ के लिए आंतरिक संवाद कैसा हो? इस नुक्ते का सार एक पंक्ति *"साझ करीजै गुणह केरी छोडि अवगण चलीऐ"* में से ढूंढा जा सकता है। यदि सारे धर्मों का आशय प्रभु-मिलाप और मानव-कल्याण है तो उनमें कुछ सांझे गुण भी अवश्य होंगे। जो शुभ गुण अपने धर्म में हैं, यदि वही शुभ गुण दूसरे के धर्म में भी हैं तो उनके साथ सांझ करने की बजाय घृणा क्यों? यदि अपने अहं से ऊपर उठकर दूसरे सारे धर्मों के सार्वभौमिक तत्त्वों (एकता के तत्व, मानव अधिकारों के तत्व, मानव आज़ादी के तत्व, शांत व्यवस्था के तत्व आदि) को पहचानकर उनका मंथन किया जाए तो वे अवश्य ही मानव समाज में एकता एवं सह-अस्तित्व स्थापित करने के लिए कारगर सिद्ध हो सकते हैं।

विश्व भाईचारे में सह-अस्तित्व स्थापित करने का तीसरा नुक्ता श्री गुरु ग्रंथ साहिब में यह है कि आंतरिक समझ स्थापित करने के लिए आंतरिक संवाद तभी होगा जब हम ऊंच-नीच, जात-पात की भावनाओं का त्याग करके इकट्ठे होकर बैठेंगे और हर प्रकार की दुविधाओं से ऊपर उठ कर दूसरे के अस्तित्व को स्वीकार करते हुए बातचीत द्वारा विश्वव्यापी समस्याओं का हल ढूंढने की कोशिश करेंगे, क्योंकि आज देशों, कौमों एवं धर्मों में सह-अस्तित्व की समस्या के कारण जो लड़ाई-झगड़े मानवता के लिए खतरा बने हुए हैं, वे मिल-बैठकर, बातचीत द्वारा ही हल हो सकते हैं।

पाद-टिप्पणियां :

१. आज भी भारत में हिंदू-हिंदी-हिंदोस्तान का नारा अल्पसंख्यकों के लिए खतरा बना हुआ है।
२. विदेशों में इसी जातीय हिंसा का शिकार हुए लोगों की खबरें रोज़ सुनने को मिलती हैं।
३. सुन्नी-शिया, दिगंबर-श्वेतांबर, हीनयान-महायान, कैथोलिक-प्रोटेस्टेंट आदि।



शाश्वत नैतिकता का आधार श्री गुरु ग्रंथ साहिब : एक संवाद

-डॉ. दीपशिखा*

मानव-मन जिज्ञासाओं का घर है। उसके मन में कहीं भी, कभी भी, किसी भी विषय को लेकर जिज्ञासा उत्पन्न हो सकती है। जिज्ञासा को मानव का मौलिक गुण कहा जा सकता है, क्योंकि किसी भी विषय सम्बंधी उसका दृष्टिकोण निजी होता है। अपनी इस जिज्ञासा-पूर्ति हेतु वह स्वाध्याय एवं अन्य के साथ तर्क-वितर्क, विचार-विमर्श करता है। यह विचार-विमर्श करना ही **'संवाद'** कहलाता है। केवल आमने-सामने बैठकर वार्तालाप करना ही संवाद नहीं है, अपितु व्यक्ति द्वारा एकाग्रचित्त-मनन अर्थात् स्वाध्याय भी संवाद ही कहलाता है। संवाद वो प्रक्रिया है जो व्यक्ति के द्वारा स्वयं उसकी आंतरिक चेतना, गहनता के बोध के बिना संभव नहीं है। स्वयं के विषय में ज्ञान होने के पश्चात ही व्यक्ति संवाद कर सकता है। संवाद के लिए एक अनिवार्य तथ्य यह भी है कि जैसे हम धर्म से संबंधित विषय पर संवाद कर रहे हैं तो हमें अपने धर्म के अतिरिक्त अन्य धर्म का ज्ञान होना भी आवश्यक है, तभी संवाद की सार्थकता, उचितता, यथार्थता को जाना-समझा जा सकता है।

मेरा मानना है कि संवाद एक ऐसा माध्यम है जो मूर्त-अमूर्त विषयों को सार्थक रूप प्रदान करता है। साथ ही पारस्परिक विषमता, चाहे वह धर्म से सम्बंधित हो, जाति से सम्बंधित हो, दो देशों या व्यक्तियों के मध्य हो, को मिटाकर सामंजस्य की भावना उत्पन्न करता है अर्थात् संवाद एक ऐसी सामूहिक सोच, समझ उत्पन्न करता है जो एकता की बुनियाद है। संवाद व्यक्ति के भीतर निर्भीकता, आत्मविश्वास, साहस उत्पन्न कर उसे सामाजिक अवलंब प्रदान करने में भी सहायक होता है। आधुनिक युग की विडंबना यह है कि आज का मानव संवाद तो क्या सामान्य बातचीत करने से भी विमुख हो चुका है। वह सतत् अपनी स्वार्थपूर्ति में लिप्त है। उसके पास किसी विशेष विषय को लेकर तो क्या किसी के साथ आम बातचीत करने का भी समय नहीं है। हम यह भी नहीं कह सकते कि आज संवाद समाप्त हो चुका है। संवाद तो अब भी होता है परंतु विषय बदल गए हैं। पहले समाज के लिए कल्याणकारी विषयों पर संवाद किया जाता था, परंतु आज जिन विषयों पर अधिकतर संवाद होता है उससे हम सब पूर्णतः परिचित हैं। उनका यहां कथन करना उचित प्रतीत नहीं होता।

आधुनिक युग की इन विकट परिस्थितियों में शाश्वत प्रेरणा के स्रोत श्री गुरु ग्रंथ साहिब की प्रत्येक पंक्ति प्रत्येक पन्ना, संवाद के योग्य है। इसमें सतत् प्रवाहित होती शाश्वत नैतिक मूल्यों की धारा हमारे सम्मुख अनेकों नैतिकतापूर्ण विषयों-- सत्य, संतोष, सेवा, अहिंसा, निंदा का त्याग, क्रोध एवं लोभ का त्याग, धर्म का पालन इत्यादि को प्रस्तुत करती है, जिन पर किया गया संवाद आज के विखंडित एवं विषैले वातावरण में पीयूष का कार्य करता है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब नैतिकता का वो वृक्ष हैं जिनकी हरियाली

*प्रोजेक्ट फैलो, गुरु गोबिंद सिंघ धर्म अध्ययन विभाग, पंजाबी यूनीवर्सिटी, पटियाला-१४७००२

चिरकालिक है तथा जिनकी छाया मानव को चिरकालिक सुख एवं आत्मिक शांति प्रदान करती है। आज का मानव नैतिकता तो क्या इसके नाम से भी अनभिज्ञ है। ५०० से अधिक वर्ष पूर्व श्री गुरु नानक देव जी ने अपनी बाणी के माध्यम से नैतिकता का वो अवलंब प्रदान किया जिसका गहन मनन, चिंतन एवं पालन करते हुए मानव को 'सचिआरा' बनने की प्रेरणा दी गई है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब की सर्वप्रथम बाणी जपु जी साहिब में श्री गुरु नानक देव जी ने 'सुणिआ', 'मंनिआ' की पउड़ी के माध्यम से यह संदेश दिया है कि जिसे पढ़ो, सुनो उसे जीवन में धारण भी करो, क्योंकि जब तक हम इसे अपनाएंगे नहीं तब तक नैतिकता के संकल्प को समझ नहीं सकते :

सुणिआ मंनिआ मनि कीता भाउ ॥
अंतरगति तीरथि मलि नाउ ॥ *(पन्ना ४)*

गुरबाणी में संतोष को बहुत महत्त्व दिया गया है। यह एक ऐसा गुण है जिसको धारण करने वाला *"हुकमि रजाई चलणा"* वाली स्थिति में विचरण करता है। वह अपने भाग्य में लिखे लेख से संतुष्ट रहता है। आज का मानव इस गुण से कोसों दूर है। उसकी इच्छाएं दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही हैं, जिनकी पूर्ति हेतु वह चोरी, हत्या जैसे अपराध भी करता है। संतोषी व्यक्ति के मन में कभी लोभ उत्पन्न नहीं होता। वह ईमानदारी से धन कमाता हुआ अपनी कमाई में संतुष्ट रहता है। उसका धैर्य भी अद्भुत होता है। वह कभी भी सच्चाई के पथ से विचलित नहीं होता। संतोष रूपी रत्न को पहनते ही उसकी सभी इच्छाएं समाप्त हो जाती हैं :

--रुखी सुखी खाइ कै ठंढा पाणी पीउ ॥
फरीदा देखि पराई चोपड़ी न तरसाए जीउ ॥
(पन्ना १३७९)

--नाम रतनु जिनि पाइआ दानु ॥
तिसु जन होए सगल निधान ॥
संतोखु आइआ मनि पूरा पाइ ॥
फिरि फिरि मागन काहे जाइ ॥ *(पन्ना ३११)*

वर्तमान मानव ईमानदारी की अपेक्षा बेईमानी को अधिक महत्त्व देता है, क्योंकि माना जाता है कि बेईमानी, छल, कपट करने से अत्यधिक धन प्राप्ति होती है। मेरा मानना है कि ईमानदारी की कमाई बेशक कम होती हो परंतु वह शाश्वत होती है। बेईमानी से कमाए धन की आयु बहुत कम होती है। ईमानदारी के रास्ते पर चलते हुए व्यक्ति को अनेक कठिनाइयों का सामना भी करना पड़ता है। उसे अपनी इच्छाओं पर अंकुश लगाना पड़ता है। अमानत में खयानत, दूसरे के धन को हड़पना घोर निंदनीय कृत्य है। गुरबाणी में ईमानदारी के महत्त्व को प्रतिपादित करते हुए कहा गया है कि किसी के हक को मारना धर्म के विरुद्ध है :

हकु पराइआ नानका उसु सूअर उसु गाइ ॥
(पन्ना १४१)

आजकल हम सबका कर्म ही बन गया है दूसरे की निंदा करना, उसकी अपकीर्ति फैलाना। इस प्रकार करते हुए हम प्रसन्नता अनुभव करते हैं। हम दूसरों के विषय में मिथ्या बातें फैलाकर अपना कार्य सिद्ध कर लेते हैं। गुरबाणी में निंदा और निंदक दोनों की आलोचना की गई है। निंदक व्यक्ति का कोई भी विश्वास नहीं करता, कोई भी उसे पास नहीं आने देता। गुरबाणी के अनुसार मनमुख व्यक्ति ही निंदा जैसा घृणित कार्य करता है। जो गुरमुख है वह स्वयं में मग्न रहता हुआ परमात्मा के नाम-सिमरन में ही अपना समय व्यतीत करता है। उसके पास अन्य बातों के लिए समय नहीं :

--निंदा भली किसै की नाही मनमुख मुगध करंनि ॥
मुह काले तिन निंदका नरके घोरि पवंनि ॥
(पन्ना ७५५)
--निंदा करि करि बहु भारु उठावै
बिनु मजूरी भारु पहुचावणिआ ॥ (पन्ना ११८)
--निंदक कउ फिटके संसारु ॥
निंदक का झूठा बिउहारु ॥ (पन्ना ११५१)

सेवा तथा सिमरन गुरबाणी के ऐसे सिद्धांत हैं जिनका पालन व्यक्ति के अहम् को मिटा उसे परोपकार हेतु प्रेरित करता है। गुरबाणी में स्पष्ट बताया है कि निष्काम सेवा हेतु संतोष, सद्भावना, मानवीय स्नेह आदि की आवश्यकता होती है। सेवा की भावना व्यक्ति के हृदय में से समस्त अज्ञानता, अहंकार के तम को मिटाकर उसके अंत: और वाह्य को प्रकाशित करती है। बड़ों की सेवा करना, उन्हें प्रणाम करना, उनकी आज्ञा मानना आदि सेवा के ही भाग हैं। गुरु, बुजुर्ग अर्थात् पूज्य वर्ग की सेवा सर्वथा ही समुन्नति की साधिका होती है। सेवा के समान सिमरन द्वारा भी मन को शांति, शरीर को सहजता, आत्मानंद की प्राप्ति होती है। अत: कह सकते हैं कि सेवा तथा सिमरन द्वारा व्यक्ति आयु, विद्या, बल, यश आदि सभी को प्राप्त करता है अर्थात् मन की वास्तविक शांति तथा जीवन में सुख सेवा एवं सिमरन द्वारा ही प्राप्त होते हैं :

--जंगम जोध जती संनिआसी गुरि पूरै वीचारी ॥
बिनु सेवा फलु कबहु न पावसि सेवा करणी सारी ॥ (पन्ना ९९२)
--सिमरउ सिमरि सिमरि सुखु पावउ ॥
कलि कलेस तन माहि मिटावउ ॥ (पन्ना २६२)

निज कर्त्तव्यों से उन्मुख व्यक्ति के लिए सेवा तथा सिमरन वो सोपान हैं जो उसे मुक्ति के अंतिम द्वार तक पहुंचाने में सहायक होते हैं :

--गुर की सेवा सदा सुखु पाए ॥
संतसंगति मिलि हरि गुण गाए ॥
नामे नामि करे वीचारु ॥
आपि तरै कुल उधरणहारु ॥ (पन्ना ३६२)
--हरि की तुम सेवा करहु दूजी सेवा करहु न कोइ जी ॥
हरि की सेवा ते मनहु चिंदिआ फलु पाईऐ
दूजी सेवा जनमु बिरथा जाइ जी ॥
(पन्ना ४९०)
--तिस की त्रिसना भुख सभ उतरै जो हरि नामु धिआवै ॥
जो हरि हरि नामु धिआइदे तिन् जमु नेड़ि न आवै ॥ (पन्ना ४५१)
--सुआमी को ग्रिहु जिउ सदा सुआन तजत नही नित ॥
नानक इह बिधि हरि भजउ इक मनि हुइ इकि चिति ॥ (पन्ना १४२८)

किसी का बुरा करना या चाहना, उसे दुख देना, पर नारी की इच्छा, पर पुरुष की चाह, किसी का वध करना आदि सभी कृत्यों को पाप कहा जाता है। गुरबाणी में बताया गया है कि जो पापी होते हैं वे परमात्मा के मुक्ति-द्वार से सदैव दूर रहते हैं। वे नरक के अधिकारी होते हैं :

--पाप करेदड़ सरपर मुठे ॥
अजराईलि फड़े फड़ि कुठे ॥
दोजकि पाए सिरजणहारै लेखा मंगै बाणीआ ॥
(पन्ना १०१९)
--कामणि लोड़ै सुइना रुपा मित्र लुड़ेनि सु खाधाता ॥
नानक पाप करे तिन कारणि जासी जमपुरि बाधाता ॥ (पन्ना १५५)

सत्य मानव जीवन का वो महनीय पक्ष है जो सर्वदा सदाचार के पालन द्वारा ही प्राप्त

होता है। सत्य को समस्त धर्मों का सार कहा गया है। हिंदू, सिक्ख, बौद्ध, ईसााई, जैन आदि सभी धर्मों में सत्य को सर्वोपरि कहा गया है। सत्य रूपी तीर्थागमन से मानव पवित्र हो जाता है। संसार में जितने भी सात्विक कार्य हैं वे सब सत्य पर आधारित हैं। सत्य वो अमृत है जिसका पान करने वाला व्यक्ति इस सांसारिक शरीर के मिट जाने पर भी सत्य रूपी देह में सर्वथा के लिए अमर हो जाता है। सत्य-पालन हेतु किसी साधन की आवश्यकता नहीं होती। इसमें वो क्षमता है कि यह स्वयं ही सामने आ जाता है। इसका पालन करने वाला व्यक्ति साहसी, निर्भीक होता है। गुरबाणी में सत्य के माहात्म्य को प्रकट करते हुए कहा गया है :

--किव सचिआरा होईऐ किव कूड़े तुटै पालि ॥
हुकमि रजाई चलणा नानक लिखिआ नालि ॥
(पन्ना २)

--सचु सचा जिनी अराधिआ से जाइ रले सच नाले ॥
सचु सचा जिनी न सेविआ से मनमुख मूड़ बेताले ॥ (पन्ना ३११)

--आवणु जाणु न सुझई भीड़ी गली फही ॥
कूड़ निखुटे नानका ओड़कि सचि रही ॥
(पन्ना ९५३)

अत: कह सकते हैं कि सत्य के अभाव में सभी तप, जप, पूजा, आराधना जैसे कार्य व्यर्थ हैं। आवश्यकता है सत्य की इस परिभाषा से मानव को अवगत करवाने की :

--इहु सचु सभना का खसमु है जिसु बखसे सो जनु पावहे ॥ (पन्ना ९२२)

--सचहु ओरै सभु को उपरि सचु आचारु ॥
(पन्ना ६२)

--पारब्रहमु जिनि सचु करि जाता ॥
नानक सो जन सचि समाता ॥ (पन्ना २८३)

क्रोध वह अग्नि है जो मानव के वंश, कुल, यश को जलाकर भस्म कर देती है। क्रोध के वेग में व्यक्ति अनेक बार ऐसे अनुचित कार्य कर बैठता है जिसका बाद में उसे पश्चाताप होता है। क्रोध ही मानव-मन में द्वेष, ईर्ष्या की भावना को जन्म देता है। यह पारस्परिक स्नेह एवं आत्मिक शांति का शत्रु है। क्रोधी व्यक्ति को उचित-अनुचित का ज्ञान नहीं होता। वह बिना सोचे-समझे ही बोलता रहता है। वह अपने ही अहं में रहता है। गुरबाणी में क्रोध के भयंकर परिणाम से मानव को सजग रहने के लिए कहते हुए गुरु जी का कथन है :

कामु क्रोधु काइआ कउ गालै ॥
जिउ कंचन सोहागा ढालै ॥ (पन्ना ९३२)

गुरु जी के अनुसार क्रोध करने से पूर्व व्यक्ति को अपने अंत:करण में देखते हुए स्थिति के विषय में शांतचित्त होकर जानने का प्रयास करना चाहिए :

रोसु न काहू संग करहु आपन आपु बीचारि ॥
(पन्ना २५९)

मानव-मन की यह प्रवृत्ति रही है कि वह जहां कहीं भी कोई आकर्षित वस्तु देखता है उसे प्राप्त करने की अभिलाषा भी उसमें वहीं उत्पन्न हो जाती है। अभिलाषा की आसक्ति ही लोभ है। लोभवश वह उस वस्तु की प्राप्ति हेतु अनेक प्रकार के षड्यंत्र, छल, कपट करता है। धन की आवश्यक रूप से प्राप्ति भी लोभ का ही अंश है। छल, कपट की यह संकीर्ण प्रवृत्ति अनेक बुराइयों की जननी है। गुरबाणी में कहा गया है कि लोभी व्यक्ति अपनी स्वार्थ-पूर्ति हेतु दर-दर भटकता फिरता है तथा अशांत रहता है। सांसारिक वस्तुओं का अनावश्यक लोभ करना अच्छा नहीं, क्योंकि व्यक्ति के अंतिम समय में उसके कर्मों ने ही साथ जाना है, ये सारी वस्तुएं

तो यहीं रह जाएंगी। मनुष्य का सांसारिक वैभव अंत में धूल में मिलकर नष्ट हो जाता है :

--लबु कुता कूड़ु चूहड़ा ठगि खाधा मुरदारु ॥
पर निंदा पर मलु मुख सुधी अगनि क्रोधु चंडालु ॥ (पन्ना १५)

--लबु लोभु मुचु कूड़ु कमावहि बहुतु उठावहि भारो ॥
तूं काइआ मै रुलदी देखी जिउ धर उपरि छारो ॥ (पन्ना १५४)

लोभ के दुष्परिणाम से मानव को अवगत करवाते हुए मेरा अपना कथन है :

हृदय की संकीर्ण प्रवृत्ति,
तो दुष्कर्मों का संवर्धक है लोभ।
तृष्णाओं की प्रबल आसक्ति,
तो मानवता की अनासक्ति है लोभ।
परिणाम जब इसका मानव समझ पाता,
काल बन सामने खड़ा होता है लोभ ।

मन की स्थिति अत्यधिक गंभीर है। यह व्यक्ति के धैर्य, शौर्य, वीरता एवं गंभीरता का निर्धारण करती है। जिस व्यक्ति का मन उसके वश में है अर्थात् सांसारिक विषयों में जिसका मन आसक्त नहीं होता वह मानव आत्मिक आनंद का अनुभव करता हुआ मोक्ष प्राप्त कर लेता है। मानव का मन अत्यधिक प्रबल है। उसकी गति बहुत तीव्र है। वह उसे इन मिथ्या सांसारिक सुख-दुख, विषय-वासनाओं की ओर सतत अनुरक्त करता रहता है। इस मोह-माया के बंधन में बंधे मन वाला व्यक्ति विषयों की प्राप्ति हेतु भटकता रहता है तथा वह भक्ति रूपी द्वार से दूर ही रहता है। गुरबाणी में मन की आलोचना करते हुए पांच चंडालों अर्थात् काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार का त्याग करने के लिए कहा गया है। साथ ही कहा गया है कि मोह-माया से मुक्त मन ही वह साधन है जिसके द्वारा साध्य रूपी गुरु को प्राप्त किया जा सकता है :

--पंच बिकार मन महि बसे राचे माइआ संगि ॥
साधसंगि होइ निरमला नानक प्रभ कै रंगि ॥ (पन्ना २९७)

--मन अंतरि बोलै सभु कोई ॥
मन मारे बिनु भगति न होई ॥ (पन्ना ३२९)

प्रभु की प्राप्ति हेतु मन को वश में करना अति अनिवार्य है। अकाल पुरख का सिमरन मन को वश में करने का सर्वोत्तम उपाय है। मन का निग्रह ही सुख-शांति का आधार है। मन की स्वाभाविक, सहज स्थिति सदाचार पर निर्भर करती है। सदाचारी व्यक्ति कभी भी मन के वश में नहीं आता। मन की पवित्रता ही वाचिक, मानसिक, शारीरिक पवित्रता का आधार है।

उक्त विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है कि वर्तमान समय की विकट परिस्थितियों की महती आवश्यकता आध्यात्मिक उन्नति है। मेरा मानना है कि प्रत्येक धर्म पारस्परिक रूप से मिलकर इन विषयों पर संवाद करे तो निस्संदेह एक अखंड, शुद्ध, पवित्र, सकारात्मक, सभ्याचारक समाज का निर्माण संभव हो सकेगा। अंतत: यह कहना उचित है :

दिलों को जोड़ता है संवाद!
एकता का प्रतीक है संवाद!
अधिक क्या कहें हम?
अखंडता का बोधक,
ईश्वर का संदेश है संवाद!



श्री गुरु ग्रंथ साहिब में वर्णित आदर्श मनुष्य का स्वरूप

*-डॉ. मधु बाला**

सामान्यत: आदर्श का अर्थ है अनुकरण करने योग्य। समाज में जो कुछ भी श्रेष्ठ है, उत्तम है, अनुपयोगी है, वह सब अनुकरणीय है। विचारणीय है कि समाज मनुष्य-समूह का ही पर्याय है। समाज में रहने वाला मनुष्य उत्तम कर्मों द्वारा ही अनुकरणीय बन सकता है। इसके लिए आवश्यक है कि उसके पास संस्कारों का कोश हो, नैतिकता का अथाह सागर हो तथा चरित्र की अपार पूंजी हो। वर्तमान युग में अव्यवस्था का मुख्य कारण यह भी है कि अनुकरण की अपेक्षा नित्य नवीन प्रयोग करते-करते समाज अव्यवस्थित हो रहा है। मनुष्य में मानवता का स्थान दानवता ले रही है। सज्जनों की संख्या कम होती जा रही है और दुर्जनों की संख्या सुरसा के मुख के समान बढ़ती जा रही है। इसका मुख्य कारण है कि सज्जनों के प्रत्येक गुण को दुर्गण बना देना।

जीवन में आदर्शों की स्थापना, उनका नियमन और नित्य व्यवहार, ये सब कार्य कृपाण की धार पर चलने के समान हैं। प्रथमत: मनुष्य जीवन में सदा-सर्वदा आदर्शों का पालन नहीं कर सकता। यदि येन-केन-प्रकारेण करता भी है तो अधिकांश मनुष्य उसे उपहास का पात्र बना लेते हैं। समय, स्थान एवं व्यक्ति के अनुसार आदर्श भी अनेक हैं।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में सहज अवस्था का वर्णन हुआ है। मन-क्रम-वचन से नाम की स्वीकृति, परमात्मा की सत्ता जगत में उसी अद्वितीय शक्ति का व्यापक दर्शन, यह सब मन की सहजता से ही संभव हो सकता है। दुर्गुणों का नाश करके सद्गुणों को स्वीकार करने वाला, विकारों का त्याग करने वाला व्यक्ति ही समाज में आदर्शत्व की स्थापना कर सकता है। जब हर्ष-शोक, सुख-दुख आदि परिस्थितियों में व्यक्ति सम अवस्था में रहता है तो धीरे-धीरे यह प्रकिया सहजता का रूप धारण कर लेती है। मनुष्य का चित्त निर्मल एवं अहंकार-रहित हो जाता है। ऐसा एकाग्रचित्त हुआ मनुष्य-मन स्वत: ही गुरु-चरणों की तरफ आकृष्ट होता है। मलिनता उसके पास भी नहीं फटकती :

गुरमुखि विचहु हउमै जाइ । गुरमुखि मैलु न लागै आइ।
गुरमुखि नामु वसै मनि आइ।
गुरमुखि करम धरम सचि होई। गुरमुखि अहंकारु जलाए दोई।
गुरमुखि नामि रते मुखु होई ॥३॥
गुरमुखि जाति पाति नामे वडिआई।
साइर सो पुत्री बिदारि गवाई । (पन्ना २३०)

ऐसे विशेष गुण-सम्पदा से युक्त मनुष्य ही अनुकरणीय है। सद्गुणों का भंडार ही मनुष्य को उत्तम बनाता है। मनमुख व्यक्ति अनुकरणीय नहीं अपितु त्याग के योग्य है। मनमर्ज़ी करने वाला मनुष्य लोक-हितकारी नहीं अपितु लोक-विनाशकारी ही होता है। गुरु साहिबान ने गुरमुख और मनमुख में अंतर स्पष्ट करते हुए कहा है :

**आई-१०९, गली नं: ५, मजीठीआ इन्कलेव, पटियाला-१४७००५, फोन ९९१४१-९०७२४*

--इकि भेख करहि फिरहि अभिमानी तिन जूऐ बाजी हारी।
इकि अनदिनु भगति करहि दिनु राती राम नामु उरि धारी। (पन्ना ९११)
--पूरे गुरु का हुकमु न मंनै ओहु मनमुखु अगिआनु। (पन्ना ३०३)

गुरमुख के अतिरिक्त एक सर्वोत्तम अवस्था है ब्रह्मज्ञानी की। ऐसी श्रेष्ठ आत्माओं में ऐसे-ऐसे दुर्लभ गुण विद्यमान होते हैं जो साधारण मनुष्य की कल्पना से भी परे का विषय होते हैं। गुरबाणी में उल्लेख मिलता है :

ब्रहम गिआनी सदा निरलेप।
जैसे जल महि कमल अलेप।
ब्रहम गिआनी सदा निरदोख।
जैसे सूरु सरब कउ सोख।
ब्रहम गिआनी कै द्रिसटि समानि।
जैसे राज रंक कउ लागै तुलि पवान। . . .
ब्रहम गिआनी की सोभा ब्रहम गिआनी बनी।
नानक ब्रहम गिआनी सरब का धनी।
(पन्ना २७२)

ब्रह्मज्ञानी का स्वरूप बतलाते हुए पंचम पातशाह कहते हैं कि ब्रह्मज्ञानी मन में सत्यस्वरूप परमात्मा के निवास को महसूस करता है। वो मुख से प्रभु का सिमरन करता है, प्रभु का ही दर्शन करता है। वो पापों से निर्लेप है; कीचड़ में खिले कमल के समान है; समदृष्टि रखने वाला होता है; सबल मनोबल वाला होता है; अग्नि सदृश मन की मैल को जला देने वाला होता है; जल-सदृश निर्मल रहता है अहंकार रहित होकर दुश्मन और मित्र को समभाव से देखता है। अंतर आनंद को अनुभव करके वह निष्पाप होकर स्वयं को तुच्छ समझता हुआ समस्त बंधनों से मुक्ति प्राप्त कर लेता है। ब्रह्मज्ञानी की सुरति सदैव अकाल पुरख से जुड़ी रहती है। उसे मात्र ईश्वर पर विश्वास होता है। वह सदा परहित-चिंतक बना रहता है। उसकी संगत से सबका कल्याण होता है। प्रभु-नाम ही उसका परिवार है। वह सदा सचेत रहता है और अहम् भाव का त्याग करता है। वह प्रसन्न, सुखी और शांत रहता है। उसका उपदेश दूसरों को पवित्र बनाने वाला है। उसका दर्शन सौभाग्य से ही होता है। अकाल पुरख ब्रह्मज्ञानी का रूप है। ब्रह्मज्ञानी का मूल्यांकन नहीं किया जा सकता। उसकी महिमा का आधा अक्षर भी बख़ान नहीं किया जा सकता। उसके गुणों रूपी समुद्र का कोई पारावार नहीं। ब्रह्मज्ञानी जीवन-दाता भी है और मुक्ति का मार्ग दिखाने वाला भी। वह अनाथों को सनाथ करने वाला सब जीवों का स्वामी है। ब्रह्मज्ञानी की महिमा कोई ब्रह्मज्ञानी ही जान सकता है और उसका बख़ान करने में समर्थ हो सकता है।

इस संसार में जो कुछ भी उत्तम है, श्रेष्ठ है, वही अनुकरणीय है। मृत्यु उपरांत तो सभी जीव इस संसार-सागर से मुक्त हो जाते हैं, परंतु श्री गुरु अरजन देव जी ने सुखमनी साहिब में जीवन-मुक्त अवस्था का लक्षण इस प्रकार बताया है :

प्रभ की आगिआ आतम हितावै ॥
जीवन मुकति सोऊ कहावै ॥ (पन्ना २७५)

प्रभु की आज्ञा में रहने वाला, उसकी रज़ा में ही अपना हित-चिंतन करते हुए जो व्यक्ति जीवन-यापन करता है वही जीवन-मुक्त है। अत: जो स्वयं मुक्त है वही दूसरों को भी मुक्त कर सकने के समर्थ हो सकता है :

आपि मुकतु मुकतु करै संसारु।
नानक तिसु जन कउ सदा नमस्कार।
(पन्ना २९५)

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में सहजता, धीरता,

दयालुता, निर्मलता, निर्दोषता, परोपकार, नि:स्वार्थ भक्ति का वर्णन मिलता है। पवित्रता, नित्य-नियम, पाठ, सिमरन, जाप, गुरु-सद्गुरु-प्रभु की आज्ञा को शिरोधार्य करना--- इन विशेष गुणों को धारण करने का जो उल्लेख मिलता है वह इस बात की ही पुष्टि करता है कि जिस इंसान में इन सब गुणों का समावेश है वही आदर्श मनुष्य है। मानव-जीवन-शैली की एक विशिष्ट प्रक्रिया ही 'आदर्श' की संज्ञा प्राप्त करती है। समाज की सुचारू व्यवस्था के लिए ही आदर्श मनुष्य की परिकल्पना की गई है। आदर्श में अनेक उत्तम नियमों, आदतों एवं व्यवहार का आधान किया गया है। निष्कर्षत: गुरबाणी के अनुसार, निर्मल-निश्छल, संत-स्वभाव, समदृष्टि-भाव का धारणकर्ता ही आदर्श मनुष्य है।



कविताएं

प्रार्थना : सत्य में श्रद्धा बढ़ाओ

दीन हूं मैं तुम हो दाता!
त्रस्त हूं मैं तुम हो त्राता!
और न मैं ठौर पाता!
आसरा बस तुमको पाता!
दुर्गुणों की खान हूं मैं!
सद्गुणों से हीन हूं मैं!
दुर्गुणों का ह्रास होवे!
सद्दुणों का वास होवे!
भीरुता को दूर कर दो !
शक्ति को तन-मन में भर दो !
मोह-काया नष्ट कर दो !
मन सदा को तृप्त कर दो !
कर्म में कर्त्तव्य-भाव!
कामना का हो अभाव!
आचरण में कर्मयोग!
राग का न कोई रोग!
भ्रमरहित कर्त्तव्य-पथ!
नि:शंक दौड़े कर्म-रथ!
स्वार्थ से होऊं विरत!
नित रहूं परहित में रत!
सत्य में श्रद्धा बढ़ाओ !
भाव भक्ति का चढ़ाओ !
ज्ञान-चक्षु खोल दो !
प्रेम-तत्त्व उड़ेल दो !

प्रार्थना भी तुम कराओ

हूं भ्रमित रस्ता न सूझे, तुम सही रस्ता सुझाओ !
जो मेरा कर्त्तव्य हो, उस मार्ग पर मुझको चलाओ !
प्रार्थना जो कर रहा हूं, उसमें भी गलती अगर,
क्या करूं? कैसे पुकारूं? प्रार्थना भी तुम कराओ !
भवसमुद यह है भयानक, मैं हूं भवदुखों का मारा।
देखता हूं दूर तक पर, दीखता न है किनारा।
तुम हो दीनों का सहारा, पार अब तुम ही लगाओ !
क्या करूं? कैसे पुकारूं? प्रार्थना भी तुम कराओ !
मैं तरूं, परिजन तरें, संसार का कण-कण तरे!
सब शरण पायें तुम्हारी, परमसुख अनुभव करें !
प्रार्थना में दोष हो तो, भाव को ही ध्यान लाओ !
क्या करूं? कैसे पुकारूं? प्रार्थना भी तुम कराओ !
तुम बनाओ, तुम बताओ, चित्त मेरा तुम लगाओ !
प्रार्थना कल्याणमयी, मुझसे प्रभो तुम ही कराओ !



-श्री प्रशांत अग्रवाल ४०, बजरिया मोतीलाल, बरेली-२४३००३ (उ. प्र.); मो : ९४११६०७६७२

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में सेवा-भाव की महिमा

*-डॉ. नवरत्न कपूर**

शब्दार्थ और गुरबाणी में वर्णित पर्याय : 'सेवा' संस्कृत भाषा का शब्द है, जिसके कोशगत अर्थ हैं : दूसरे को आराम पहुंचाने की क्रिया; ख़िदमत; नौकरी; उपासना; शरण; चाकरी; दास्य-भाव। मज़बूरी में किए गए काम (सेवा) के कारण मनुष्य में दास्य-भाव उत्पन्न होता है। इसी को गुलामी कहते हैं। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में 'सेवा' करने वाले व्यक्ति (सेवक) की परिभाषाएं इस प्रकार दी गई हैं, जो कि इन शब्दों के सामान्य अर्थ की सूचक हैं, यथा :

हुकमु बूझै सो सेवकु कहीऐ ॥
बुरा भला दुइ समसरि सहीऐ ॥ (पन्ना १०७६)

अर्थात् सेवक उसी को कहते हैं, जो अपने मालिक के आदेश को समझता है। भले ही उससे अच्छा व्यवहार किया जाए अथवा बुरा, वह दोनों में एक समान रहता है।

--सो जपु तपु सेवा चाकरी जो खसमै भावै ॥ (पन्ना १२४७)

--अबे तबे की चाकरी किउ दरगह पावै ॥
पथर की बेड़ी जे चड़ै भर नालि बुडावै ॥ (पन्ना ४२०)

--जन नानकु हाटि विहाझिआ हरि गुलम गुलामी ॥ (पन्ना १६८)

--ठाकुर का दास गुरमुखि होई ॥ (पन्ना ३५५)

सेवा संबंधी परंपरावादी सोच और गुरमति : वैश्विक आर्थिक परंपरा में 'सेवा' का मुख्य अर्थ है किसी कारण मज़बूर, निर्धन, साधनहीन अथवा अनपढ़ व्यक्ति द्वारा जीवित रहने के लिए, अपने मालिक के आराम के लिए की गई मेहनत। गुलामी (दासता) और चाकरी करने वाला व्यक्ति अपने मालिक (स्वामी) की परछाईं मात्र रह जाता है। कई देशों में तो गुलामी या दासत्व-प्रथा पीढ़ी दर पीढ़ी चलती है। अफ़सोस की बात है कि भारतीय समाज में किसान, मज़दूर, मोची, शिल्पी, नाई आदि व्यवसाय से सम्बंधित हाथ का काम करके रोज़ी कमाने वाले लोगों को कुछ दशाब्दियों पूर्व घृणा की दृष्टि से देखा जाता था। किसी को शूद्र और किसी को पिछड़ी जाति का कहा जाता था। गुरमति में सभी प्रकार के सेवा-कार्य पवित्र ही नहीं बल्कि उन्हें ईमानदारी से निभाते हुए, प्रभु में आस्था रखने वाले विनम्र व्यक्ति के कार्यों को मानव-कल्याणकारी समझा जाता है और उस पर ईश्वर-कृपा सदैव बनी रहती है, यथा :

जाति जनमु नह पूछीऐ सच घरु लेहु बताइ ॥
सा जाति सा पति है जेहे करम कमाइ ॥
(पन्ना १३३०)

गुरमति में सेवा और भक्ति समानार्थक शब्द माने गए हैं, यथा :

गुर की सेवा गुर भगति है विरला पाए कोइ ॥
(पन्ना ६६)

सेवा को भक्ति का एक साधन भी बताया गया है, यथा :

गुर सेवा बिनु भगति न होई ॥
अनेक जतन करै जे कोई ॥ (पन्ना १३४२)

सेवा वस्तुत: ईश्वर अथवा गुरु के प्रति

**बी-१८०१, प्लाट नं. १०६, तुलसी सागर हाऊसिंग सोसाइटी, सेक्टर-२८, नेरूल, नवी मुंबई-४००७०६, मो ०२२-२७७२९६९६*

समर्पण-भाव है, जो ईश्वर तथा गुरु के बोधक 'वाहिगुरू' शब्द में निहित है, यथा :

ऐसी सेवकु सेवा करै ॥ जिस का जीउ तिसु आगै धरै ॥

साहिब भावै सो परवाणु ॥ सो सेवकु दरगह पावै माणु ॥ *(पन्ना ६६१)*

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में 'सेवा' के तीन प्रकार बताए गए हैं :

(१) हरि-सेवा (भगवद्-भक्ति); (२) सतिगुरु-सेवा (गुरु-भक्ति) और (३) साधसंगत की सेवा अथवा सतसंग। प्रत्येक का विवरण इस प्रकार है :

(१) हरि-सेवा : श्री गुरु ग्रंथ साहिब निराकार भक्ति-परक पदावलि का समुच्चय है। इसमें निराकार ईश्वर की पूजा का साधन प्रभु-नाम-सिमरन बताया गया है और इसे ही हरि-सेवा का मुख्य स्वरूप माना जाता है। एतद्दर्थ गुरु साहिबान के शुभ वचन हैं :

--एहा सेवा चाकरी नामु वसै मनि आइ ॥ *(पन्ना ३४)*

--हरि सेवा महि परम निधानु ॥

हरि सेवा मुखि अंम्रित नामु ॥ (पन्ना ३७५)

नाम-सिमरन वस्तुत: प्रेमा-भक्ति का सूचक है। गुरु की कृपा के फलस्वरूप ही मनुष्य इसमें अनुरक्त होता है और सदैव प्रभु-दर्शन *(वेखहि हजूरि)* का अनुभव करता है। तत्संबंधी श्री गुरु ग्रंथ साहिब के मनोहर वचन हैं :

--से भगत सतिगुर मनि भाए ॥ अनदिनु नामि रहे लिव लाए ॥

सद ही नामु वेखहि हजूरि ॥ गुर कै सबदि रहिआ भरपूरि ॥ *(पन्ना १२७४)*

--हरि भगति हरि का पिआरु है जे गुरमुखि करे बीचारु ॥ *(पन्ना २८)*

गुरमति में नाम-सिमरन की महिमा सर्वोच्च मानी गई है। काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार रूपी मनुष्य के मानसिक विकार सूचक रोगों से छुटकारा दिलाने वाली औषधि *(अउखधु)* एक मात्र प्रभु-सिमरन में विद्यमान है। गुरु की कृपा से प्राप्त ऐसे प्रभु-नाम के जाप से मनुष्य चौरासी लाख योनियों वाले सांसारिक जीवों के जन्म-मरण के बंधन से छूट जाता है और उसे मोक्ष की प्राप्ति स्वत: हो जाती है। एतद्दर्थ भक्त भीखण जी के शुभ वचन हैं :

हरि का नामु अंम्रित जलु निरमलु इहु अउखधु जगि सारा ॥

गुर परसादि कहै जनु भीखनु पावउ मोख दुआरा ॥ *(पन्ना ६५)*

(२)सतिगुरु सेवा : सतिगुरु को गुरबाणी में कई जगह साक्षात परमेश्वर रूप कहा गया है, यथा :

--गुरु पारब्रहमु परेमसरु आपि ॥ (पन्ना ३८७)

--गुर की महिमा किआ कहा गुरु बिबेक मत सरु ॥

ओहु आदि जुगादी जुगह जुगु पूरा परमेसरु ॥ *(पन्ना ३९७)*

--सतिगुरु देउ परतखि हरि मूरति जो अंम्रित बचन सुणावै ॥

नानक भाग भले तिसु जन के जो हरि चरणी चितु लावै ॥ *(पन्ना १२६४)*

सच्चा गुरु ही निराकार भक्ति-परक नाम-सिमरन की शिक्षा अपनी शरण में आए व्यक्तियों (गुरमुखों) को देता है। इसीलिए गुरु की महिमा का बखान श्री गुरु ग्रंथ साहिब में अनेक स्थलों पर किया गया है, यथा :

गुरु तीरथु गुरु पारजातु गुरु मनसा पूरणहारु ॥
गुरु दाता हरि नामु देइ उधरै सभु संसार ॥
गुरु समरथु गुरु निरंकारु गुरु ऊचा अगम अपारु ॥

गुर की महिमा अगम है किआ कथे कथनहारु ॥
(पन्ना ५२)

नाम-सिमरन द्वारा हरि-भक्ति (ईश्वर-भक्ति) का उपदेशक गुरु भी सदा सर्वदा सेवा योग्य है, यथा :

--धनु धनु गुरु सत पुरखु है जिनि भगति हरि दीनी ॥
जिसु गुर ते हरि पाइआ सो गुरु हम कीनी ॥
(पन्ना १६३)
--सोई सेवकु जे सतिगुर सेवे चालै सतिगुर भाए ॥ *(पन्ना ७५३)*

ऐसे भगवद्-स्वरूप एवं भक्ति-भाव के प्रेरणादाता गुरु की हर प्रकार की सेवा करनी चाहिए। पुराने समय में लोग गर्मी से बचने के लिए गुरु को पंखा झुलाते थे। वे कुएं से खींचकर उसके लिए पानी भी लाते थे और किसी निकट स्थान पर चक्की न होने के कारण उसके आश्रम में रखी हुई चक्की से आटा भी पीसते थे। तत्संबंधी गुरु-सेवा का विस्तृत वर्णन श्री गुरु ग्रंथ साहिब के निम्नलिखित पद में हुआ है, यथा :

तिसु गुर कउ झुलावउ पाखा ॥
महा अगनि ते हाथु दे राखा ॥
तिस गुर कै ग्रिहि ढोवउ पाणी ॥
जिसु गुर ते अकल गति जाणी ॥
तिसु गुर कै ग्रिहि पीसउ नीत ॥
जिसु परसादि वैरी सभ मीत ॥ (पन्ना २३९)

गुरु की सेवा ही वस्तुतः गुरु-भक्ति का साक्षात् प्रतीक है। यह दास्य-भाव की भक्ति तो बहुत कम लोगों को ही प्राप्त होती है, यथा :

भाई रे दासनि दासा होइ ॥
गुर की सेवा गुर भगति है विरला पाए कोइ ॥
(पन्ना ६६)

(३) साधसंगत की सेवा अथवा सतसंग : प्रिंसिपल तेजा सिंघ का कथन है-- "केवल मुख से राम-राम (प्रभु-नाम) शब्द को बार-बार तोते की तरह रटने से प्रभु-नाम का जप नहीं हो सकता। प्रभु-नाम जपने का भाव है वाहिगुरु को हाज़र-नाज़र (प्रत्यक्ष रूप में विद्यमान) समझकर उसका गुणगान करने और इस भांति अपने ध्यान की सीमा बढ़ाने से ही वाहिगुरु से मिलाप होने का सूचक है। ऐसा संगत अन्य श्रद्धालुओं का समूह के साथ मिलकर सामूहिक (गुरबाणी) कीर्तन करने अथवा (गुरबाणी का) श्रवण करने से ही आसानी से हो जाता है।" *(सिक्ख धरम, पृष्ठ २७)*

प्रिंसिपल तेजा सिंघ के कथन का सारांश यही है कि सतसंग में अन्य श्रद्धालुजन के साथ मिलकर प्रभु-नाम-सिमरन करना ही प्रभु-दर्शन का सर्वश्रेष्ठ साधन है और मनुष्य की सभी प्रकार की शुद्ध मनोकामनाओं की पूर्ति *"अंतरि रतन जवेहर माणक"* का मूल स्रोत भी यही है, यथा :

सतिगुरु साधसंगति है नीकी ॥
मिलि संगति रामु रवीजै ॥
अंतरि रतन जवेहर माणक गुर किरपा ते लीजै ॥
(पन्ना १३२४)

सिक्ख धर्म में गुरु और संगत का अटूट संबंध है। भले ही गुरु साक्षात रूप में विराजमान हो अथवा गुरबाणी के रूप में चर्चित हो, तभी सतसंग की सार्थकता सिद्ध होती है, यथा :

सतिगुर बाझहु संगति न होई ॥
बिनु सबदे पारु न पाए कोई ॥
सहजे गुण रवहि दिनु राती जोती जोति मिलाइआ ॥ *(पन्ना १०६८)*

वस्तुतः सतसंग में पधारने वालों की सेवा ही गुरु की सेवा है और गुरु की सेवा ही सतसंगियों की सेवा है। निष्कर्ष यही है कि हरि-

सिमरन तथा गुरु-भक्ति का क्रियाशील रूप मानव की सेवा है। सच तो यह है कि अपने हाथों से की गई सेवा ही सच्ची सेवा है। इस संबंध में गुरबाणी के मनोहर वचन हैं :

पानी पखा पीसउ संतु आगै गुण गोविंद जसु गाई ॥
सासि सासि मनु नामु सम्रारै इहु बिस्राम निधि पाई ॥ (पन्ना ६७३)

आज भी गुरुद्वारा साहिबान में कुछ लोग परिसर के बाहर बने जूता घर (जोड़ा घर) में श्रद्धालुओं के जूतों को सुरक्षित रखने और लंगर घर में ज़मीन पर पलथी लगाकर लंगर छकने के लिए बैठे हुए अभिलाषियों को लंगर बांटते हैं और मन ही मन 'वाहिगुरु-वाहिगुरु' का जाप करते रहते हैं। वस्तुतः यही निष्काम सेवा है जिसका लक्षण इस प्रकार बताया गया है :

गुर कै ग्रिहि सेवकु जो रहै ॥ गुर की आगिआ मन महि सहै ॥
आपस कउ करि कछु न जनावै ॥ हरि हरि नामु रिदै सद धिआवै ॥
मनु बेचै सतिगुर कै पासि ॥ तिसु सेवक के कारज रासि ॥
सेवा करत होइ निहकामी ॥ तिस कउ होत परापति सुआमी ॥ (पन्ना २३६)

निष्कर्ष यही है कि जो सद्गृहस्थ व्यक्ति ईमानदारी से आजीविका-उपार्जन करते हुए किसी भी धर्म-स्थल पर यदि निष्काम सेवा करते हैं वे अत्यंत संतुष्ट, सद्मार्गगामी, खान-पान में अत्यंत संयमी और अपनी प्रत्येक जीवनोपलब्धि के प्रति प्रभु का धन्यवाद करने वाले होते हैं। ऐसे लोगों के मान-सम्मान और धन-धान्य की सदैव वृद्धि होती है। ऐसे सद्गुण-संपन्न व्यक्ति तथा हरि-सेवक की चारित्रिक विशेषताओं का उल्लेख श्री गुरु ग्रंथ साहिब के निम्नलिखित पद में हुआ है, यथा :

सेव कीती संतोखीईं जिन्ही सचो सचु धिआइआ ॥
ओन्ही मंदै पैरु न रखिओ करि सुक्रितु धरमु कमाइआ ॥
ओन्ही दुनीआ तोड़े बंधना अंनु पाणी थोड़ा खाइआ ॥
तूं बखसीसी अगला नित देवहि चड़हि सवाइआ वडिआई वडा पाइआ ॥ (पन्ना ४६७)

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में मोक्ष सम्बंधी आए विचार *(पृष्ठ २३ का शेष)*

तर्क और आत्मिक खुशी का सही मेल कराती है। श्री गुरु अरजन देव जी उच्चारण करते हैं कि यदि सतिगुरु के साथ मिलाप हो जाए तो उस व्यक्ति को सही जीवन जीने की युक्ति आ जाती है। हंसते-खेलते, खाते-पीते अर्थात् संसार में विचरण करते हुए विषय-वासनाओं से बचकर रहा जा सकता है :

नानक सतिगुरि भेटिऐ पूरी होवै जुगति ॥
हसंदिआ खेलंदिआ पैनंदिआ खावंदिआ विचे होवै मुकति ॥ (पन्ना ५२२)

श्री गुरु अमरदास जी फरमान करते हैं कि जो मनुष्य वाहिगुरु की तरफ से मुंह मोड़ लेता है उसे आत्मिक आनंद नसीब नहीं होता, क्योंकि गुरु के बिना माया के प्रभाव से मुक्ति नहीं मिल सकती। वाहिगुरु के सिमरन के बिना अन्यत्र कहीं से भी सांसारिक बंधनों से मनुष्य मुक्त नहीं हो सकता, अनेक योनियों में भटकता ही रहता है :

अनेक जूनी भरमि आवै विणु सतिगुर मुकति न पाए ॥ (पन्ना ९२०)

श्री गुरु ग्रंथ साहिब की बाणी का संकलन एवं संपादन

*-डॉ. कशमीर सिंघ 'नूर'**

संसार के महान्, अद्वितीय, अद्भुत ग्रंथ श्री गुरु ग्रंथ साहिब की महानता, उच्चता व संपूर्णता का वर्णन करने हेतु हमारा संपूर्ण जीवन भी काफी नहीं है। अकाल पुरख का जो दिव्य प्रकाश है, वही दिव्य प्रकाश श्री गुरु ग्रंथ साहिब का है। जितने भी निराश प्राणी, इसकी शरण में आते हैं, उन सभी की निराशाओं के अंधेरे को इसका परम प्रकाश मिटा देता है। इसमें छः सिक्ख गुरु साहिबान के अलावा विभिन्न संतों-भक्तों आदि की बाणी शामिल है।

यह पावन ग्रंथ भारत की सांस्कृतिक, भाषाई सांझ का भी प्रतीक-स्तंभ है और यह अनेकता में एकता, अखंडता, सौहार्द को बढ़ावा देने वाला संरक्षक ग्रंथ है। इसमें पंजाबी के अलावा हिंदी, संस्कृत, फारसी, गुजराती, सिंधी तथा ब्रज भाषाओं में रचित बाणी को शामिल किया गया है। जैसे-जैसे समय व्यतीत होता जा रहा है, वैसे-वैसे इस पावन ग्रंथ की भाषा व शब्दावली हमें प्राचीन जैसी लगती है, लेकिन जिस कालखंड में इस बाणी की रचना हुई और जिस समय श्री गुरु अरजन देव जी ने इसका संपादन व संकलन किया, उस समय यह भाषा व शब्दावली साहित्यिक मानी जाती थी, साधारणजनों द्वारा उपयोग में लाई जाती थी। जिन शब्दों व वाक्यों को हम आधुनिकवादी कठिन समझते हैं उन शब्दों व वाक्यों को पुराने समय में आम लोग भी आसानी से बोल व समझ लेते थे। जिन संतों, महापुरुषों, व्याख्याकारों, टीकाकारों, कथावाचकों आदि ने इस महान् ग्रंथ के संदेश को जन-जन तक पहुंचाया है, उनके कार्य व योगदान को भुलाया नहीं जा सकता।

अगर दुनिया के प्रसिद्ध इतिहासकार, विद्वान, दार्शनिक, बुद्धिजीवी तथा लेखक श्री गुरु अरजन देव जी को संसार का सबसे महान् संपादक व संकलनकर्ता मानते हैं तो इसमें कोई अतिश्योक्ति नहीं है। गुरु जी शहीदों के सिरताज, शांति के पुंज, अहिंसा व सहनशीलता के पुजारी, महान् समाज-सुधारक, उपदेशक और प्रसिद्ध बाणीकार तो थे ही अपितु जिस दृढ़ निश्चय, संकल्प, कौशल, लगन व सेवाभाव से उन्होंने श्री गुरु ग्रंथ साहिब की बाणी का संकलन तथा संपादन किया, उसकी जितनी भी प्रशंसा की जाए कम है।

श्री गुरु अरजन देव जी के पास सभी महापुरुषों की बाणी थी। उन्होंने सारी बाणी को तरतीब (शृंखला) देने का अर्थात् एक माला में पिरोने का ख़्याल किया। उस समय 'नानक' नाम के अंतर्गत पंचम गुरु के बड़े भाई प्रिथीचंद का पुत्र मिहरबान भी कविता (कच्ची बाणी) लिख रहा था। भय था कि असली बाणी में कहीं यह कविता मिल न जाए? भोले-भाले सिक्खों के लिए यह मुश्किल हो सकती थी कि वे गुरु साहिबान की बाणी तथा कच्ची बाणी में अंतर कैसे करें।

श्री गुरु अरजन देव जी ने भाई गुरदास जी को क्रमानुसार बाणी को लिपिबद्ध करने यानि लिखने के लिए कहा। भाई गुरदास जी ने उनका आदेश पाकर इकट्ठी हुई बाणी को पवित्र पन्नों पर उतारने का काम शुरू कर दिया। यहां यह बताना ज़रूरी है कि जो पोथियां

**बी-एक्स ९२५, महल्ला संतोखपुरा, होशियारपुर रोड, जलंधर-१४४००४, मो. ९८७२२-५४९९०*

बाबा मोहन के पास थीं उन्हें बाबा मोहन ने गुरु जी को स्वयं सौंपा था। बाणी को संभालना, सहेजकर रखना, महान् विरासत, सभ्यता और संस्कृति को संभाल व सहेजकर रखने वाला कार्य था। यह कार्य श्री गुरु अरजन देव जी ने बहुत मेहनत के साथ संपन्न किया। एक गवाही के अनुसार, उन्होंने भाई गुरदास जी से कहा, *"भक्त की सभ मेलो। साची राखो, झूठी पेलो।"* यह उस भक्त-बाणी के संदर्भ में कहा गया, जिसे श्री गुरु ग्रंथ साहिब में शामिल किया जाना था। उन्हीं भक्तों की बाणी को शामिल किया गया, जिनकी विचारधारा, नियम, सिद्धांत सब श्री गुरु नानक देव जी की विचारधारा से मेल खाते थे। यूं तो कान्हा, छज्जू, पीलू, शाह हुसैन आदि कवियों ने भी अपनी-अपनी कविता शामिल करने का आग्रह किया था। इसे गुरु जी ने 'कच्ची बाणी' कहकर नकार दिया।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब की आदि बीड़ के संपादन एवं लेखन का कार्य १५ भादों, संवत् १६६१ को संपूर्ण हुआ और संवत् १७ भादों, संवत् १६६१ को श्री हरिमंदर साहिब में इसका प्रकाश (स्थापन) हुआ। श्री गुरु ग्रंथ साहिब की आदि बीड़ को बाबा बुड्ढा जी अपने शीश पर रखकर तथा पंचम गुरु जी स्वयं चौर (चंवर) करते हुए श्री हरिमंदर साहिब में लाए थे। जो पहला हुकमनामा आया, वो था : *"संता के कारजि आपि खलोइआ हरि कंमु करावणि आइआ राम ॥"*

श्री गुरु ग्रंथ साहिब के संपादन, संकलन और प्रकाश को अद्भुत, आलौकिक, सर्वश्रेष्ठ, सर्वोत्तम, ऐतिहासिक कार्य व घटना कहा जा सकता है। इसमें भेदभाव, ऊंच-नीच, जात-पात कर्मकांड, मूर्ति-पूजा आदि का खंडन किया गया है। जो प्राणी श्री गुरु ग्रंथ साहिब में सच्ची निष्ठा व श्रद्धा रखता है, उसे शक्ति और भक्ति के प्रसादि (कृपा) के साथ मुक्ति का वरदान (फल) भी प्राप्त होता है। यह पावन ग्रंथ शोक, चिंता, भ्रांति, भ्रम, अज्ञानता का नाश करता है और मन को निर्मल बना देता है। भवसागर से पार जाने के लिए यह अति उत्तम जहाज़ है; परम पिता परमेश्वर से मिलाप का सर्वोत्तम साधन है।

कविताएं

फूल-सा जीवन

फूल-सा जीवन बनाइए!
महक-चहक का नगमा गाइए!
पत्ती-पत्ती बनता रूप सुहाना।
हर कोई चाहता इसको पाना।
सुंदर ही सुंदर शाम-सवेरे।
देख लो चाहे इन्हें बीच अंधेरे।
कई रंगों की महफिल फूल।
कुछ भी न कर सके इसको धूल।
सतिगुरु के जब अर्पित हो जाता।
तबी ही समझो पावन हो पाता।
न कोई इसे यूं ही तोड़े!
पौधे से न तोड़-विछोड़े!

शबद अनाहद

शबद अनाहद है युगीन-युगांतर।
जीवन आधार पावन गुर-मंत्र।
सुबह उठकर स्नान करना।
नित्यनेम का जप-जाप जपना।
फिर अपने जीवन-कर्म में जुट जाना।
तन-मन को हक की राह पर चलाना।
संभव सहज मेहनत भी करना।
प्रभु-यश को मन में धरना।
ईर्ष्या-निंदा-आलस्य त्याग देना।
गुरु का शबद मन में बसा लेना।



-डॉ. सुरिंदरपाल सिंघ, पत्तण वाली सड़क, पुराना शाला, गुरदासपुर-१४३५२१, मो. ९४१७१-७५८४६

गुरबाणी चिंतनधारा : ७२

सुखमनी साहिब : विचार व्याख्या

*-डॉ. मनजीत कौर**

बारहवीं असटपदी

सलोकु॥
सुखी बसै मसकीनीआ आपु निवारि तले ॥
बडे बडे अहंकारीआ नानक गरबि गले ॥१॥
(पन्ना २७८)

गुरु पंचम पातशाह बारहवीं असटपदी के सलोक में विनम्रता रूपी गुण को धारण करने वाले तथा अहंकारी जीव के लक्षणों को बहुत सुंदर ढंग से प्रस्तुत करते हैं। गुरु पातशाह पावन फरमान करते हैं कि विनम्रता को हृदय में धारण करने वाला व्यक्ति सदैव सुखी रहता है जबकि इसके विपरीत अहंकारी व्यक्ति अपने अहंकार में ही तबाह हो जाता है अर्थात् जीव को अपनी किसी भी प्राप्ति, यथा-- बल-बुद्धि, धन-पदार्थ, मान-सम्मान, ओहदा, जप-तप, ज्ञान-ध्यान, रूप-सौंदर्य आदि का अहंकार हो जाता है। हकीकत में इन सबका दाता परमेश्वर है। जीव जब दातार पिता को भुला देता है तो यही बात उसके दुखों का कारण बन जाती है। इसके विपरीत स्वभाव वाला, विनम्रता का धारणी मनुष्य सदैव ईश्वर की रहमत से सुखपूर्वक निवास करता है।

असटपदी ॥
जिस कै अंतरि राज अभिमानु ॥
सो नरकपाती होवत सुआनु ॥
जो जानै मै जोबनवंतु ॥
सो होवत बिसटा का जंतु ॥
आपस कउ करमवंतु कहावै ॥
जनमि मरै बहु जोनि भ्रमावै ॥
धन भूमि का जो करै गुमानु ॥
सो मूरखु अंधा अगिआनु ॥
करि किरपा जिस कै हिरदै गरीबी बसावै ॥
नानक ईहा मुकतु आगै सुखु पावै ॥१॥

बारहवीं असटपदी की पहली पउड़ी में गुरु पंचम पातशाह ने अभिमानी व्यक्ति के लक्षण एवं उसकी अधम स्थिति का ज़िक्र किया है। गुरु पातशाह पावन फरमान करते हैं कि जिस व्यक्ति के अंदर राजपाट का अभिमान है वह नर्कगामी कुत्ते जैसा ही समझो! जो अपने यौवन का गरूर करता है अर्थात् जिसमें सुंदर होने का गुमान है वह गंदगी का कीड़ा ही होता है, क्योंकि अपने रूप-यौवन के अभिमान में वह सदा विषय-विकारों में ही लिप्त रहता है। जो जीव अपने आप को श्रेष्ठ, शुभ कर्म करने वाला कहलाता है वह हमेशा जन्म-मरण (आवागमन) के चक्कर में पड़कर अनेक योनियों में भटकता रहता है। जो व्यक्ति धन और भूमि का अभिमान करता है अर्थात् जो यह सोचता है कि मेरे पास इतनी ज़मीन-जायदाद है और मैं ही इसका मालिक हूं वह तो मानो नितांत मूर्ख और अज्ञानी है। उसे जाहिल और निपट ग्वार ही समझो! अंतिम पंक्तियों में गुरु पातशाह पावन संदेश देते हैं कि परमेश्वर रहमत करके जिसके हृदय में नम्रता बसा देता है उसे तो मानो जीते-जी (इस जीवन में ही) मुक्ति प्राप्त हो गई। वह इस लोक में विकारों से पूर्णतया मुक्त होकर परलोक में भी सुख प्राप्त करता है।

*२/१०४, जवाहर नगर, जयपुर-३०२००४, मो: ९९२९७-६२५२३

वस्तुत: दुनिया में किसी की प्राप्ति का अभिमान व्यर्थ है, क्योंकि जीवन में हुई प्राप्ति क्षणभंगुर है। दुनिया का कोई भी पदार्थक सुख, यहां तक कि हमारा जीवन भी, सब कुछ नाशवंत है। जो सदा कायम रहने वाला ही नहीं उसका कैसा अभिमान? प्रत्येक व्यक्ति कहने को तो यह कहता है कि तन-मन-धन सब है तेरा, लेकिन हम सब अपने-अपने हृदय में झांक कर देखें तो हमें यह सब कुछ अपना लगता है। हम मोह-माया में अंधे हुए भूल जाते हैं कि जिस मालिक ने यह सब कुछ दिया है उसने ही यह वापिस ले लेना है। क्षण भर में निर्माण और विध्वंस करने की सामर्थ्य वाला प्रभु हमें भूल जाता है और हम इन तुच्छ प्राप्तियों का गुमान (अहंकार) कर बैठते हैं। गुरबाणी में अन्यत्र भी पंचम पातशाह ने बड़ा सुंदर समझाया है :

किआ थोड़ड़ी बात गुमानु ॥१॥रहाउ॥
जैसे रैणि पराहुणे उठि चलसहि परभाति ॥
किआ तूं रता गिरसत सिउ सभ फुला की बागाति ॥२॥
मेरी मेरी किआ करहि जिनि दीआ सो प्रभु लोड़ि ॥
सरपर उठी चलणा छडि जासी लख करोड़ि ॥३॥
(पन्ना ५०)

जीव तो इस दुनिया में मेहमान की तरह है। वह मूर्खतावश सराय को स्थायी समझकर स्वयं को उसका मालिक समझने की गुस्ताखी आजीवन करता रहता है। इसी अभिमान में वह अपने जीवन-मार्ग से भटककर बेशकीमती जीवन और श्वासों की पूंजी बर्बाद कर बैठता है। अवसर चूक जाने पर इसके पास केवल पश्चाताप ही रह जाता है। जीवों के अपने वश में कुछ भी नहीं है। वाहिगुरु आप जिस पर कृपा करता है उसे ही हउमै जैसे दीर्घ रोग से मुक्त कर उसका लोक-परलोक संवार देता है:

धनवंता होइ करि गरबावै ॥
त्रिण समानि कछु संगि न जावै ॥
बहु लसकर मानुख ऊपरि करे आस ॥
पल भीतरि ता का होइ बिनास ॥
सभ ते आप जानै बलवंतु ॥
खिन महि होइ जाइ भसमंतु ॥
किसै न बदै आपि अहंकारी ॥
धरम राइ तिसु करे खुआरी ॥
गुर प्रसादि जा का मिटै अभिमानु ॥
सो जनु नानक दरगह परवानु ॥२॥

बारहवीं असटपदी की दूसरी पउड़ी में भी अहंकारी व्यक्ति की अधम स्थिति का वर्णन करके जीव को सतर्क करते हुए पंचम पातशाह पावन फरमान करते हैं कि मनुष्य धनवान होने पर धनी होने का अभिमान करता है लेकिन उसके साथ मरते वक्त एक तिनका भी साथ नहीं जाता। कहने का भाव, यहां मनुष्य जितना मर्ज़ी पाप-कर्म करके धन का संग्रह कर ले लेकिन यहां के पदार्थ यहीं रह जायेंगे। उनमें से एक भी वस्तु यह साथ नहीं ले जा सकता। यह प्रकृति का अटल नियम है। फिर भी अज्ञानतावश जीव दुनियावी प्राप्तियों का अभिमान करता है। मनुष्य के सारे दुनियावी आसरे झूठे हैं और ये आसरे सदैव उसका आश्रय नहीं बन सकते। स्वयं को ज्यादा ताकतवर और बलवान मानने वाला क्षण भर में ही नष्ट हो जाता है। अहंकारग्रस्त हुआ व्यक्ति किसी अन्य को कुछ नहीं समझता और किसी की परवाह नहीं करता। जब काल आता है तो वो अहंकारी मनुष्य पल भर में नाश हो जाता है। अंतिम पंक्ति में श्री गुरु अरजन देव जी हिदायत करते हैं कि गुरु-कृपा से जिस जीव का अंहकार मिट जाता है वह जीव परमेश्वर की दरगाह में प्रवान हो जाता है अर्थात् सतिगुरु की रहमत से

ही जीव प्रभु के समक्ष स्वीकृत है अर्थात् उसके चरणों में कबूल है।

स्पष्ट है कि अहंकार मनुष्य के विनाश का कारण है। इसका निवारण केवल सतिगुरु की कृपा से ही संभव है, नहीं तो जीव चौरासी के चक्करों में ही भ्रमण करता हुआ अपना दुर्लभ मनुष्य-जन्म व्यर्थ गंवा बैठता है। भक्त रविदास जी की बाणी इस संदर्भ में हमारा मार्गदर्शन करती है :

हम बड कबि कुलीन हम पंडित हम जोगी संनिआसी ॥
गिआनी गुनी सूर हम दाते इह बुधि कबहि न नासी ॥२॥
कहु रविदास सभै नही समझसि भूलि परे जैसे बउरै ॥
मोहि आधारु नामु नाराइन जीवन प्रान धन मोरे ॥३॥ (पन्ना ९७४)

गुरबाणी में यही संकेत किया गया है कि जब तक जीव अहंकार का शिकार है तब तक इसे परमेश्वर कहीं दूर बसता प्रतीत होता है। जब जीव स्वयं को नम्रता रूपी गुण से सबकी चरण-धूलि समझता है तब इसे कण-कण में समाया परमेश्वर सर्वत्र दिखाई देने लगता है, यथा :

जब इहु मन महि करत गुमाना ॥ तब इहु बावरु फिरत बिगाना ॥
जब इहु हूआ सगल की रीना ॥ ता ते रमईआ घटि घटि चीना ॥१॥ (पन्ना २३५)

गुरबाणी हमें विनम्रता के धारक होने का पावन संदेश देती है। श्री गुरु नानक देव जी ने तो (आसा की वार) बाणी में मीठा बोलने एवं विनम्रता धारण करने को समस्त गुणों का सार बताया है और साथ ही एक गहरे भाव को भी स्पष्ट कर दिया है। आप पावन फरमान करते हैं :

मिठतु नीवी नानका गुण चंगिआईआ ततु ॥
सभु को निवै आप कउ पर कउ निवै न कोइ ॥
धरि ताराजू तोलीऐ निवै सु गउरा होइ ॥
अपराधी दूणा निवै जो हंता मिरगाहि ॥
सीसि निवाइऐ किआ थीऐ जा रिदै कुसुधे जाहि ॥१॥ (पन्ना ४७०)

हमें गुरु-कृपा से हृदय में नम्रता धारण करनी होगी तभी यह मनुष्य जीवन सार्थक हो सकेगा।

कोटि करम करै हउ धारे ॥
स्रमु पावै सगले बिरथारे ॥
अनिक तपसिआ करे अहंकार ॥
नरक सुरग फिरि फिरि अवतार ॥
अनिक जतन करि आतम नही द्रवै ॥
हरि दरगह कहु कैसे गवै ॥
आपस कउ जो भला कहावै ॥
तिसहि भलाई निकटि न आवै ॥
सरब की रेन जा का मनु होइ ॥
कहु नानक ता की निरमल सोइ ॥३॥

उपरोक्त पउड़ी में पंचम पातशाह कलयुगी जीवों का मार्गदर्शन करते हुए निर्मल उपदेश करते हैं कि जीव की प्राप्तियों के साथ अगर कर्त्ता-भाव प्रबल होने के कारण अहंकार उत्पन्न होता है तो समझ लेना कि उसके समस्त धार्मिक आयोजन, जप-तप, पूजा-पाठ व्यर्थ ही चले जाते हैं। इस सबके कर लेने मात्र से उसकी सच्ची शोभा नहीं होती। सब कुछ का कर्त्ता एवं कारण उस परमेश्वर को मानकर किये गए कर्मों से ही मनुष्य का कल्याण संभव है और इसी से उसे सच्चा मान-सम्मान मिलता है।

गुरु पातशाह फरमान करते हैं कि अगर मनुष्य करोड़ों धार्मिक कर्म करे और साथ ही उन्हें करने का मन में अहंकार भी करता रहे, तो परिणामस्वरूप वह ये सब कर्म बोझ ढोने की तरह ही करता प्रतीत होगा। जो व्यक्ति अनेक

तरह की तपस्या करके उसका अहंकार करता है ऐसा जीव भी जन्म-मरण के चक्कर लगाता रहेगा तथा नर्क-स्वर्ग अर्थात् कभी दुख तो कभी सुख भोगता रहेगा। आगे गुरु पातशाह हिदायत करते हैं कि अगर अनेक कर्म करके भी जीव के हृदय में विनम्रता नहीं आती तो विचारने वाली बात है कि ऐसा जीव मालिक की दरगाह में नहीं पहुंच सकता। अनेक उपक्रम भी जिसकी आत्मा में दया एवं प्रेम-भाव उत्पन्न नहीं कर सकते अर्थात् इन प्रयोजनों से भी जिसका हृदय रूपांतरित नहीं होता, वह प्रभु की दरगाह में नहीं प्रवान हो सकता। जिसका हृदय सबकी चरण-धूलि बन जाता है गुरु पातशाह के चिंतनानुसार उसे ही शोभा (बढ़ाई) प्राप्त होती है अर्थात् सर्वत्र गुणगान विनम्रता से ही संभव है, अभिमान से नहीं।

समस्त धर्म-ग्रंथों में यही समझाया गया है कि परमेश्वर को अहंकार अच्छा नहीं लगता, क्योंकि वह तो वाहिदे-ला-शरीक है। अहंकारी व्यक्ति स्वयं को प्रभु के समकक्ष रख उसका शरीक बनने की कोशिश करता है। उसकी यही हरकत उसे परमेश्वर की रहमत से वंचित कर देती है। गुरबाणी में भी सर्वत्र इसी भाव की पुष्टि होती है, यथा :

हरि जीउ अहंकारु न भावई वेद कूकि सुणावहि ॥
अहंकारि मुए से विगती गए मरि जनमहि फिरि आवहि ॥ *(पन्ना १०८९)*

अहंकार रूपी दीर्घ रोग से बचने हेतु हमें सतिगुरु के चरणों में हर पल अरदास करनी चाहिए।

जब लगु जानै मुझ ते कछु होइ ॥
तब इस कउ सुखु नाही कोइ ॥
जब इह जानै मै किछु करता ॥
तब लगु गरभ जोनि महि फिरता ॥
जब धारै कोऊ बैरी मीतु ॥
तब लगु निहचलु नाही चीतु ॥
जब लगु मोह मगन संगि माइ ॥
तब लगु धरम राइ देइ सजाइ ॥
प्रभ किरपा ते बंधन तूटे ॥
गुर प्रसादि नानक हउ छूटै ॥४॥

उपरोक्त पउड़ी में पंचम पातशाह जीव का मार्गदर्शन करते हैं कि जब तक जीव के अंत:-करण में कर्त्ता-भाव प्रबल है अर्थात् जब तक वो यह सोचता है कि मैं कुछ करने योग्य हूं, तब तक वो आवागमन में ही भटकता रहता है। साथ ही वह जब तक विकारों में ग्रसित है तब तक यमराज की सज़ा सहता रहेगा। अहंकार-रहित होकर ही जीव समस्त बंधनों से सहजता से मुक्त हो सकता है।

गुरु पातशाह पावन फरमान करते हैं कि जब तक व्यक्ति के मन में यह गुमान है कि मैं कुछ करने में समर्थ हूं तब तक इसे (आत्मिक) सुख नहीं मिल सकता है। जब तक जीव का यह भ्रम बना रहता है कि मैं किसी कर्म का कर्त्ता हूं अर्थात् जब जीव कर्त्ता-भाव से कर्म करता है तब तक गर्भ-योनियों में भटकता रहता है। जीव को अपनी ताकत का अभिमान ही आवागमन के चक्कर में फंसाए रखता है। जब तक मनुष्य किसी को शत्रु अथवा मित्र समझता है तब तक इसका चंचल मन स्थिर नहीं होता अर्थात् दुश्मन के साथ ईर्ष्या-द्वेष तथा मित्र-दोस्तों के साथ मोह-माया का सम्बंध दोनों ही जीव के लिए घातक सिद्ध होते हैं। जब तक जीव धन-दौलत के मोहपाश में बंधा रहता है अर्थात् मायिक पदार्थों में मगन है तब तक धर्मराज इसे सज़ा देता ही रहता है। माया के बंधनों से मुक्ति परमेश्वर की रहमत से ही मुमकिन है। पंचम पातशाह अंतिम पंक्ति में गुरु की महिमा बताते हुए स्पष्ट करते हैं कि

मनुष्य का अहंकार गुरु-कृपा से ही छूटता है। अतः अहंकार से छुटकारा पाना कोई सहज साधना नहीं है।

अहंकारी व्यक्ति अपने कर्त्ता-भाव के कारण अपने पुण्य-कर्मों को भी नष्ट कर देता है। ठीक वैसे ही जैसा कि गुरबाणी में समझाया गया है कि ऐसे जीव की अवस्था हाथी की तरह है, जो नदी में नहाकर अपने शरीर पर मिट्टी डाल लेता है, यथा :

तीरथ बरत अरु दान करि मन मै धरै गुमानु ॥
नानक निहफल जात तिह जिउ कुंचर इसनानु ॥
(पन्ना १४२८)

वास्तव में मोह-माया के बंधनों से बचना जीव के वश की बात नहीं है। यह तो प्रभु-कृपा से ही संभव है। गुरु-कृपा से ही इस दीर्घ रोग से छुटकारा मुमकिन है। नवम् पातशाह की बाणी जीव का मार्गदर्शन करती है :

जिहि प्रानी हउमै तजी करता रामु पछानि ॥
कहु नानक वहु मुकति नरु इह साची मानु ॥
(पन्ना १४२७)

कविता

सच्चा एक हरि हमारा

मन रे! यह जग झूठा, सच्चा एक हरि हमारा।
स्वार्थ के सब संगी-साथी, झूठ का चहुं ओर पसारा।
मीठे वचन बोल वश करें, माया-जाल फैलाएं न्यारा।
स्नेह, आत्मीय, बहिन-भ्राता, इनसे बढ़कर 'मैं' तुम्हारा!
सुत, दारा, सगे-संबंधी, लोभ में लिपटे देते नारा।
तू 'मेरा', मैं 'तेरा', जग में फैला 'सुख' सारा।
जब तक स्वार्थ, सब हैं अपने, फिर दूर करें किनारा।
अर्थ ही सच्चा संबंधी, यह नियम बनाये संसारा।
कहत 'अरुण' सुनो भाई बंधु! यह जग दुखों की धारा।
एक हरि है सच्चा साथी, यश-समृद्धि देने वाला।
निःस्वार्थी हरि है बंधु, सुख-दुख में तारन वाला।
न छोड़े मझधार में वह, रखे हरदम ध्यान हमारा।
स्वार्थ से ऊपर जो उठ जाए, वो हरि का परम प्यारा।

-डॉ. अरुण रानी, ६०७, न्यू आवास विकास कालोनी, सहारनपुर (उ. प्र.)-२४७००१



सभी लेखक बधाई के पात्र हैं

पत्रिका 'गुरमति ज्ञान' निरंतर प्राप्त हो रही है। अध्यात्म की यह उच्च कोटि की पत्रिका है। जुलाई, २०१३ के अंक में प्रकाशित श्री गुरू हरिगोबिंद साहिब से संबंधित आलेख ज्ञान से परिपूर्ण हैं। सभी आलेखों के लेखकों ने अति परिश्रम कर आलेखों को ज्ञानवर्धक बनाया है। सभी लेखक बधाई के पात्र हैं। कविताएं--'सिंघ गर्जना', 'ये पेड़ ऊंचे', 'मैं हूं तुम्हारा तुम ही निभाओ' पठनीय व सराहनीय हैं। डॉ. सत्येंद्रपाल सिंघ का आलेख 'गुर सिखी बारीक है-२६' सतिगुरु-महिमा से ओत-प्रोत है। सच्चा गुरु शिष्य के मन के विकारों को दूर कर उसका हृदय निर्मल बनाता है। सतिगुरु-कृपा से वह मोह-माया से छुटकारा पा सकता है। अध्यात्म-ज्ञान से परिपूर्ण सम्पूर्ण पत्रिका पठनीय व संग्रहणीय है।

-डॉ. अरुण रानी (सहारनपुर)

गुर सिखी बारीक है---२८

-डॉ. सत्येंद्रपाल सिंघ*

गुरु-घर में गुरसिक्ख भिक्षुक भाव से जाता है और पंच ठगों (अवगुणों) से मुक्ति और परमात्मा की कृपा मांगता है। गुरमति इसे 'गरीबी' की संज्ञा देती है। इससे अधिक सटीक और उपयुक्त संज्ञा कोई और नहीं हो सकती। एक गरीब जिसके पास न तो कोई मान है, न ज्ञान है, न कौशल बुद्धि है, न ही धन-सम्पदा, परिवार, समाज का कोई आश्रय है। कुछ भी नहीं है जिसकी वह ओट ले सके। मोह-माया में रचे इस संसार में व्यवहारत: ऐसा असंभव है कि मनुष्य के पास मान करने लायक कुछ न हो। ज्ञानी तो अपने ज्ञान में मान करता है, अज्ञानी अपने अज्ञान के कारण मान करता है। बहुसंख्या ऐसे ही लोगों की है।

माथै त्रिकुटी द्रिसटि करूरि ॥
बोलै कउड़ा जिहबा की फूड़ि ॥
सदा भूखी पिरु जानै दूरि ॥ (पन्ना ३९४)

एक सतिगुरु ही है जिस पर मान किया जा सकता है। अन्य पर मान करने वालों की दशा ऐसी है कि सदैव माथे पर बल पड़े हुए हैं, तनाव, समस्याओं ने घेरा हुआ है। दृष्टि अर्थात् सोच क्रूर हो गयी है और सदा दूसरों का अहित, दूसरों के प्रति रोष, वितृष्णा का भाव ही उपज रहा है। ऐसा व्यक्ति किसी से भी सद्व्यवहार नहीं करता और अहंकार से भरी दूसरों को दुख पहुंचाने वाली बातें ही करता है। बेचैनी की इस अवस्था में मन की शांति और सुख के लिए वह सदैव विह्वल रहता है, किंतु सुख और आनंद उससे दूर ही रहता है। ऐसा मनुष्य सदैव किसी न किसी विकार का शिकार है और सुख की याचना के लिए सतिगुरु-परमात्मा की शरण में चला भी जाए तो भाव कम स्व अधिक होगा जिससे कुछ भी प्राप्त नहीं हो सकेगा।

अचेत पिंडी अगिआन अंधारु ॥
बिनु सबदै किउ पाए पारु ॥ (पन्ना ८४२)

जिसे परमात्मा की सच्ची राह का ज्ञान नहीं है वह अज्ञानी है और उसे जीवन-फल प्राप्त नहीं हो सकता। ऐसे ज्ञानहीन उस देह के समान हैं जिसमें सांसें तो चल रही हैं किंतु चेतना नहीं है। संसार में ज्ञानी वह है जिसे अपनी गरीबी का ज्ञान है और ऐसा भाव उसने मन में धारण भी किया हुआ है। इस बात की प्रतीति हो जाना कि उसमें कोई बुद्धि, बल, गुण, ज्ञान नहीं है, उसे परमात्मा की कृपा से ज्ञानवान बना देता है और उसका आचरण भी उसके गरीबी-भाव से मेल खाने लगता है।

हउ तिसु घोलि घुमाइआ गुरमति रिदै गरीबी आवै।
हउ तिसु घोलि घुमाइआ पर नारी दे नेड़ि न जावै।
हउ तिसु घोलि घुमाइआ पर दरबै नो हथु न लावै।
हउ तिसु घोलि घुमाइआ पर निंदा सुणि आपु हटावै।
हउ तिसु घोलि घुमाइआ सतिगुर दा उपदेसु कमावै।
हउ तिसु घोलि घुमाइआ थोड़ा सवै थोड़ो ही खावै।

*E-१७१६, राजाजीपुरम, लखनऊ-२२६०१७, मो. : ९४१५९६०५३३

गुरमुखि सोई सहजि समावै ॥ *(वार १२:४)*

भाई गुरदास जी ने कहा है कि वे ऐसे गुरसिक्ख पर कुर्बान जाते हैं जिसने अपने मन में गरीबी का भाव धारण कर लिया है और इस प्रतीति में जी रहा है। गरीब वह है जो काम-वासनाओं से विरत हो गया है और जो उस धन-सम्पदा की चाह नहीं रखता जिस पर उसका कोई अधिकार नहीं है अथवा जो उसने अपने श्रम-उद्यम से नहीं अर्जित की है। वह परनिंदा से अर्थात् व्यर्थ के वाद-विवादों से स्वयं को अलग रखता है। ऐसी चर्चाएं न तो वह करता है और न ही उनमें रस लेता है। वह अपने जीवन को इतना अनुशासित और संयमित कर लेता है कि कम खाकर और कम सोकर वह प्रसन्न रहता है। अपने समय और शक्ति का सदुपयोग वह सतिगुरु की शिक्षाओं का पालन करने में करता है। ऐसे शुद्ध आचरण वाला ही गुरसिक्ख है और परमात्मा उस पर ही कृपा करता है।

अंतरि रतनु बीचारे ॥
गुरमुखि नामु पिआरे ॥
हरि नामु पिआरे सबदि निसतारे
अगिआनु अधेरु गवाइआ ॥
गिआनु प्रचंडु बलिआ घटि चानणु
घर मंदर सोहाइआ ॥ *(पन्ना ७७४)*

गुरसिक्ख के लिए परमात्मा का नाम बहुमूल्य है जिसे प्रेमपूर्वक मन में धारण करने से अज्ञान दूर हो जाता है अर्थात् मोह-माया और विकारों का सच सामने आ जाता है। इससे परमात्मा का प्रेम और विश्वास प्रबल हो जाता है तथा आनंद की अवस्था बन जाती है। अंतर में उपजे ज्ञान के प्रकाश से गुरसिक्ख की भावनाएं शिखर पर जा पहुंचती हैं और उसका तन-मन परमात्मा के प्रेम में रंग जाता है।

रसना अगह अगह गुन राती नैन दरस रंगु लाए ॥
होहु क्रिपाल दीन दुख भंजन मोहि चरण रिदै वसाए ॥२॥
सभहू तलै तलै सभ ऊपरि एह द्रिसटि द्रिसटाए ॥
अभिमानु खोइ खोइ खोइ खोई हउ मो कउ सतिगुर मंत्रु द्रिड़ाए ॥ *(पन्ना ८२०)*

गुरसिक्ख के मन के अभिमान का *"खोइ खोइ खोइ"* अर्थात् समूल नाश हो जाता है। अभिमान रंच मात्र भी नहीं बचता है। मन में परमात्मा की प्रीति दृढ़ होने लगती है। गुरसिक्ख स्वयं को मिट्टी की धूल की तरह समझता है जो सबके पैरों के नीचे रहती है। जिन्होंने उसे पैरों तले रौंदा है उनके मरने के बाद उनकी मृतक देह के ऊपर पड़ने के काम भी आती है। इससे सहज और संतोष की अवस्था और कृपा हो सकती है, जिसकी तैयारी एक गुरसिक्ख सतिगुरु की कृपा से करता है और इसी कारण गुरमति को अनमोल रत्न की संज्ञा दी गई है। गुरसिक्ख की रसना पर सदैव परमात्मा के अथाह गुणों और नयनों में परमात्मा के दर्शन की ललक बनी रहती है। जिस मन की ऐसी अवस्था बन जायेगी उसकी याचना भी शिखर पर पहुंची हुई याचना होगी :

प्रभ जी तू मेरे प्रान अधारै ॥
नमसकार डंडउति बंदना अनिक बार जाउ बारै ॥१॥रहाउ॥
ऊठत बैठत सोवत जागत इहु मनु तुझहि चितारै ॥
सूख दूख इसु मन की बिरथा तुझ ही आगै सारै ॥१॥
तू मेरी ओट बल बुधि धनु तुम ही तुमहि मेरै परवारै ॥
जो तुम करतु सोई भल हमरै पेखि नानक सुख चरनारै ॥२॥ *(पन्ना ८२०)*

ज्ञान के प्रकाश में गुरसिक्ख देखने और मानने लगता है कि सांसारिक सम्बंध और वस्तुएं मिथ्या हैं। एक परमात्मा ही है जो उसका सहायक, उसकी शक्ति, बुद्धि और धन है। परमात्मा ही उसका अपना और सच्चा सम्बंधी है। वह परमात्मा को ही अपने जीवन का आधार मानता है; अपने मन की सारी व्यथा उसके आगे ही खोलता है अर्थात् किसी अन्य से कोई आशा नहीं रखता है। सदा उसकी ही वंदना करता है और उसका ही मन में ध्यान करता है।

गुरमति के अनुसार मन में भाव हो, गुरु-उपदेश के अनुकूल आचरण हो तो गुरु-घर की मर्यादा स्वयं समझ आ जाती है। भावना से गुरु-घर जाने वाला यह नहीं याद रखता कि वह क्या है। उसकी भावना उसके साथ जाती है। *"प्रभ जी तू मेरे प्रान अधारै"* और गुरु-घर में 'प्राण आधार' को पाकर वह आनंदित हो जाता है। उसका *"घर मंदर सोहाइआ"* अर्थात् जीवन संवरने लगता है। गुरु-घर वह अपने 'प्राण आधार' को मिलने जाता है इसलिए उसका सम्पूर्ण ध्यान अपने 'प्राण आधार' अर्थात् सतिगुरु श्री गुरु ग्रंथ साहिब पर ही केंद्रित रहता है। वह गुरु-शबद में एक मन होकर रम जाता है, क्योंकि गुरु-घर जाने का उसका और कोई मनोरथ ही नहीं होता। किसी अन्य मनोरथ से गुरु-घर जाने वाला गुरसिक्ख नहीं हो सकता। गुरसिक्ख गुरु-घर में गुरु-शबद के उस रस के लिए आया है जिससे अधिक मीठा संसार में कुछ भी नहीं है और जिसके बिना उद्धार नहीं है।

नामै ही ते सभु किछु होआ बिनु सतिगुर नाम न जापै ॥
गुर का सबदु महा रसु मीठा बिनु चाखे सादु न जापै ॥
कउडी बदलै जनम गवाइआ चीनसि नाही आपै ॥
गुरमुखि होवै ता एको जाणै हउमै दुखु न संतापै ॥१॥
बलिहारी गुर अपणे विटहु जिनि साचे सिउ लिव लाई ॥
सबदु चीन्हि आतमु परगासिआ सहजे रहिआ समाई ॥१॥रहाउ॥
गुरमुखि गावै गुरमुखि बूझै गुरमुखि सबदु बीचारे ॥
जीउ पिंडु सभु गुर ते उपजै गुरमुखि कारज सवारे ॥ *(पन्ना ७५३)*

गुरमुख, जिसे गुरु-शबद से प्रीति हो गयी है, उसे ही इस बात की अनुभूति है कि गुरु-शबद में कैसी मिठास अर्थात् जीवन-प्रेरणा है। जो इससे वंचित है उसका अमूल्य जीवन तो कौड़ियों में जा रहा है। गुरसिक्ख अपनी दीनता और सतिगुरु की सामर्थ्य को पहचान लेता है तभी तो उसे दुख और संताप छू नहीं पाता। यह शबद-गायन करता है, उसे समझता है और उस पर विचार करके व्यवहार में भी लाता है। सुख और आनंद की प्राप्ति के लिए जिस परमात्मा से मिलने गुरसिक्ख गुरु-घर में आया है वह उसे गुरु-शबद के माध्यम से ही मिलता है। इस विचार को केंद्र में रखने पर गुरु-घर की मर्यादा की राह स्वयं ही निकल आती है कि गुरु-शबद के अतिरिक्त अन्य किसी भी बात पर गुरसिक्ख का ध्यान न जाये। जिस गुरु-शबद से उसे महारस हासिल होने वाला है उस गुरु-शबद का सत्कार करने का सलीका भी गुरसिक्ख को आ जाता है और वह गुरु-शबद को पूरी तरह जान, समझ और अंगीकार कर लेना चाहता है। इस ध्येय के साथ गुरु-घर जाने वाला गुरसिक्ख इसलिए गुरु-घर जाता है क्योंकि वहां श्री गुरु ग्रंथ साहिब का प्रकाश हो रहा है। बाकी सारी चीजों का उसके लिए कोई महत्त्व

नहीं रहता। हर वह स्थान शोभनीय है जहां श्री गुरु ग्रंथ साहिब का प्रकाश हो जाता है :

जिथै जाइ बहै मेरा सतिगुरू सो थानु सुहावा राम राजै ॥
गुरसिखी सो थानु भालिआ लै धूरि मुखि लावा ॥
गुरसिखा की घाल थाइ पई जिन हरि नामु धिआवा ॥
जिन्ह नानकु सतिगुरु पूजिआ तिन हरि पूज करावा ॥ (पन्ना ४५०)

उपरोक्त गुरु-वचन के आलोक में यह मति ग्रहण करना सरल हो जाता है कि गुरु-घर की शोभा श्री गुरु ग्रंथ साहिब से है न कि अन्य कारणों से, जो सांसारिक दृष्टि से हमें महत्त्वपूर्ण लगते हैं। गुरसिक्ख गुरु-घर की धूल को भी पावन समझकर मस्तक पर लगाता है और वहां जाकर स्वयं को गुरु-शबद से जोड़ता है। ऐसा करने वाले का जीवन सफल और अनुकरणीय हो जाता है।

गुर उपदेस अदेसु करि पैरी पै रहरासि करंदे ॥
चरण सरणि मसतकु धरनि चरन रेणु मुखि तिलक सुहंदे।
भरम करम दा लेखु मेटि लेखु अलेख विसेख बणंदे।
जगमग जोति उदोतु करि सूरज चंद न लख पुजंदे।
हउमै गरबु निवारि कै साधसंगति सच मेलि मिलंदे।
साधसंगति होइ भवर वसंदे ॥ (वार ६:७)

गुरसिक्ख वही जो मन में परमात्मा का भाव धारण कर स्वयं को परमात्मा के चरणों में समर्पित कर देता है। परमात्मा के चरणों में समर्पण को अपना बड़ा भाग्य समझ वह इसे मस्तक पर अर्थात् जीवन में प्रमुखता से धारण करता है। उसके सारे संदेह मिट जाते हैं और सच की समझ आ जाती है। इससे उसका जीवन इस तरह प्रकाशित हो जाता है जिसका मुकाबला लाखों सूरज और चंद्रमा का प्रकाश भी नहीं कर सकते। वह अपने घमंड को छोड़कर साधसंगत में मिल बैठता है और उसे परमात्मा का स्वरूप जानकर साधसंगत की कृपा प्राप्त करता है। ऐसा करने वाले गुरसिक्ख के पास सुख-समृद्धि भंवरे की तरह घूमती-फिरती है। गुरसिक्ख के सारे दुख मिट जाते हैं :

दुसट बिदारे साजन रहसे इहि मंदिर घर अपनाए ॥
जउ ग्रिहि लालु रंगीओ आइआ तउ मै सभि सुख पाए ॥३॥
संत सभा ओट गुर पूरे धुरि समतकि लेखु लिखाए ॥
जन नानक कंतु रंगीला पाइआ फिरि दूखु न लागै आए ॥ (पन्ना १२६६)

विकार, अवगुण मिटते हैं, सद्गुण प्रकट होते हैं और अंतर में परमात्मा बस जाता है। परमात्मा की कृपा से सारे सुख मिलते हैं। साधसंगत जीवन की पूर्ण सहायक बन जाती है। ऐसा भाग्य से होता है। गुरसिक्ख गुरुद्वारे के अंदर जाकर पहला कर्म करता है श्री गुरु ग्रंथ साहिब के आगे माथा टेकने का। इसके उपरांत गुरु-रूप साधसंगत के दर्शन करके सहजता से *"वाहिगुरू जी का खालसा, वाहिगुरू जी की फ़तहि"* बोलता है।

गुरु-घर में सतिगुरु का आदर करना है, गुरु-रूप साधसंगत का भी सम्मान करना है। ऐसी विनम्रता और भावना लेकर गुरसिक्ख गुरु-घर आता है :

हम मूरख अगिआन सरनि प्रभ तेरी करि किरपा राखहु मेरी लाज पते ॥ (पन्ना ८७६)



शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के अध्यक्ष साहिबान : १२

जत्थेदार प्रीतम सिंघ 'खुड़ंज'

*-स. रूप सिंघ**

सत्य, संतोष, सहज के धारक, मिष्ठभाषी, सूझवान, अकाली नेता जत्थेदार प्रीतम सिंघ का जन्म स. बिशन सिंघ तथा माता बसंत कौर के घर वाड़ा वरिआम सिंघ, ज़िला फ़िरोजपुर में हुआ। स. प्रीतम सिंघ तीन भाई थे। ये स. रजिंदर सिंघ तथा स. गुरनाम सिंघ दोनों में मंझले थे। इनकी पारिवारिक पृष्ठभूमि मध्यवर्गीय मलवई किसान परिवार के साथ थी। खेतीबाड़ी व ज़मीन के विभाजन के कारण कुछ समय इनके परिवार को गांव रत्ताखेड़ा, पंजाब सिंघ वाला में भी निवास करना पड़ा, लेकिन स्थाई रूप से इनको गांव खुड़ंज में ही निवास रखना पड़ा, जिसके कारण इनके नाम के साथ 'खुड़ंज' शब्द जुड़ गया। चाहे ये मध्यवर्गीय किसान परिवार के साथ सम्बंधित थे, परंतु इनके माता-पिता की इच्छा थी कि बच्चों को खूब पढ़ाया-लिखाया जाए। आपने प्रारंभिक शिक्षा अपने क्षेत्र के स्कूल से प्राप्त कर दसवीं कक्षा का इम्तिहान १९३३ ई में मोगा के हाई स्कूल से पास किया। युवावस्था में ये शिरोमणि अकाली दल में शामिल हो गए तथा धर्म के प्रति निष्ठा, कौम-सेवा के जज़्बे व भावना के कारण अंतिम श्वासों तक रोम-रोम से गुरु-घर के साथ जुड़े रहे।

आप जी का विवाह बीबी गुरबचन कौर के साथ गांव अबुल खुराणा में हुआ। इनकी इकलौती सुपुत्री बीबी सुरिंदरपाल कौर स. हरदपिंदर सिंघ के साथ बादल गांव में ब्याही हुई है। स. हरदपिंदर सिंघ १९७९ ई. में चक्क फ़तह सिंघ वाला, ज़िला श्री गंगानगर (राजस्थान) से शिरोमणि गु. प्र. कमेटी के सदस्य नामजद किए गए। अब गांव खुड़ंज में स. प्रीतम सिंघ के कुछ नज़दीकी रिश्तेदार बस रहे हैं।

युवावस्था में ही लोक-सेवा में जुट जाने के कारण आप जी के धार्मिक, राजनीतिक एवं सामाजिक क्षेत्र में कार्यशील वर्कर से लेकर पार्टी के मुखिया तक बहुत अच्छे सम्बंध थे। उस समय मालवा क्षेत्र के इन गांवों की हालत खसता थी। आप जी के यत्नों के कारण क्षेत्र की बेहतरी के लिए प्रशंसायोग्य कार्य हुए। आप जी ने बिजली-पानी के प्रबंध के अतिरिक्त विद्या के प्रसार के लिए स्कूल चालू कराने का उद्यम किया।

धार्मिक, सामाजिक तथा राजनीतिक कार्यों में बढ़-चढ़कर हिस्सा लेने के कारण आप जी तहसील श्री अमृतसर साहिब से सदस्य, शिरोमणि गु प्र कमेटी चुने गए। २८ मई, १९४९ ई को हुए शिरोमणि गु प्र कमेटी के पहले जनरल समागम के समय आप जी बतौर सदस्य हाज़िर हुए। ४ अप्रैल, १९५१ ई को मास्टर तारा सिंघ जी देश-विभाजन के बाद फिर शिरोमणि गु. प्र. कमेटी के अध्यक्ष चुने गए। अध्यक्ष की हैसियत से उन्होंने आप जी को कार्यकारिणी सदस्य चुना।

५ अक्तूबर, १९५२ ई. को जनरल समागम के समय जत्थेदार ऊधम सिंघ ने अध्यक्ष-पद के लिए स. नाहर सिंघ लुधियाना का नाम पेश किया तथा स. उमराओ सिंघ एडवोकेट पट्टी ने स. प्रीतम सिंघ खुड़ंज का नाम पेश किया। अध्यक्ष-पद के लिए दो नाम पेश होने पर वोटें डाली गईं। स. नाहर सिंघ को ७१ वोटें तथा आप जी को ७८ वोटें प्राप्त हुईं। इस तरह

**सचिव, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर-१४३००६; मो: ९८१४६-३७९७९*

आप जी शिरोमणि गु. प्र. कमेटी के अध्यक्ष चुने गए। शेष कार्यवाही आपकी अध्यक्षता में सम्पूर्ण हुई। स. सनमुख सिंघ चमन, वरिष्ठ उपाध्यक्ष तथा स. करतार सिंघ वलटोहा, कनिष्ठ उपाध्यक्ष, शिरोमणि गु. प्र. कमेटी चुने गए।

१८ जनवरी, १९५३ ई. को हुए विशेष जनरल इजलास के समय बाकायदा कार्यवाही शुरू होने पर अध्यक्ष व महासचिव वही रहे जो पिछले साल चुने गए थे तथा कार्यकारिणी में थोड़ी अदला-बदली की गयी। ४ मार्च, १९५३ ई. को जनरल समागम आप जी की अध्यक्षता में हुआ, जिसमें १४४ सदस्य हाज़िर हुए। शिरोमणि गु. प्र. कमेटी का वर्ष १९५३-१९५४ का बजट स. सनमुख सिंघ चमन, वरिष्ठ उपाध्यक्ष ने पेश किया तथा अध्यक्ष साहिब की आज्ञा से धर्म-अर्थ खाते में ४०००/- रुपए खर्च की मद में बढ़ाए जाने की तजवीज़ पेश की, जिसको बजट में प्रवान किया गया।

ननकाणा साहिब एजूकेशन ट्रस्ट को इंजीनियरिंग कॉलेज, लुधियाना खोलने के लिए दो लाख रुपए शिरोमणि गु. प्र. कमेटी के दस्तकारी फंड में से सहायता के रूप में दिए जाने की प्रवानगी दी गयी। गुरुद्वारा श्री ननकाणा साहिब तथा गुरुद्वारा श्री पंजा साहिब की अमानत में से गुरुद्वारा एक्ट में आवश्यकतानुसार संशोधन हो जाने के उपरांत आठ लाख रुपए की अदायगी भी उक्त ट्रस्ट को कर दी गई।

ठीक एक साल बाद १८ जनवरी, १९५४ ई. को शिरोमणि गु. प्र. कमेटी की स्पेशल जनरल एकत्रता हुई, जिसमें जत्थेदार ऊधम सिंघ नागोके ने एकत्रता का प्रयोजन स्पष्ट किया तथा विशेष एकत्रता के एजंडे के अनुसार यह प्रस्ताव पेश किया कि शिरोमणि गु. प्र. कमेटी की यह जनरल एकत्रता कार्यकारिणी पर अविश्वास प्रकट करती है। इसके उपरांत सर्वसम्मति से यह प्रस्ताव पारित हो गया। इस तरह इस दिन ही आप जी की अध्यक्षता का काल संपूर्ण हो गया।

आप जी मालवा क्षेत्र के पहले अकाली अगुआ थे, जिनको शिरोमणि सिक्ख संस्था शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर के अध्यक्ष के पद पर आसीन होने का मान-सम्मान प्राप्त हुआ। शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी में स. प्रीतम सिंघ खुड़ंज पंथ-रत्न मास्टर तारा सिंघ जी के ग्रुप से संबंधित थे। इनकी मित्रता पूर्व राष्ट्रपति ज्ञानी ज़ैल सिंघ के साथ भी गहरी थी। आम वर्कर से शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के अध्यक्ष की पदवी पर पहुंचने वाले स. प्रीतम सिंघ खुड़ंज बहुत ही निच्छल, साधारण खुराक तथा पहरावे के धारक, समय पर सत्य बोलने वाले, बेखौफ़ एवं धर्मी नेता थे। आप जी की सुपुत्री के बताने के अनुसार सरदार साहिब इतनी निष्काम भावना वाले श्रद्धालु सिक्ख थे कि गुरु-घर से परशादा भी नहीं छकते थे। हर समय घर से परशादा तैयार करवाकर अपने साथ ले जाते थे। गुरुद्वारों में देसी घी की देग प्रचलित करने में इन्होंने विशेष योगदान डाला।

पंथक-प्यार व जज़्बे से ओत-प्रोत सिक्ख शख़्सियत स. प्रीतम सिंघ खुड़ंज कुछ समय बीमार रहने के उपरांत ३ अगस्त, १९७९ ई. को परलोक गमन कर गए। ३१ अगस्त, १९७९ को पंथ-रत्न जत्थेदार गुरचरन सिंघ टौहड़ा की अध्यक्षता में हुई कार्यकारिणी की एकत्रता के समय प्रस्ताव सं. ३२ द्वारा स. प्रीतम सिंघ खुड़ंज की याद में शोक-प्रस्ताव पारित किया गया तथा इनकी सेवाओं की प्रशंसा की गई। अरदास की गयी कि परमात्मा बिछुड़ी आत्मा को अपने चरणों में निवास बख़्शिश करे; पीछे समूह परिवार, सम्बंधियों तथा स्नेहियों को प्रभु का हुक्म मानने का बल प्रदान करे। आप जी की तसवीर केंद्रीय सिक्ख संग्रहालय में सुशोभित है।



ख़बरनामा

जत्थेदार ज्ञानी तरलोचन सिंघ का आकस्मिक निधन

श्री अमृतसर : १ अगस्त : तख़्त श्री केसगढ़ साहिब, श्री अनंदपुर साहिब के जत्थेदार सिंघ साहिब ज्ञानी तरलोचन सिंघ का दिल का दौरा पड़ने के कारण ३१ जुलाई-१ अगस्त की मध्य रात्रि को निधन हो गया। उस समय वे श्री अनंदपुर साहिब में अपने गृह में विश्राम कर रहे थे। वे सन् २००३ से तख़्त श्री केसगढ़ साहिब के जत्थेदार के पद पर सुशोभित थे।

जत्थेदार ज्ञानी तरलोचन सिंघ के आकस्मिक निधन पर गहरा शोक व्यक्त करते हुए शिरोमणि गु. प्र. कमेटी के अध्यक्ष जत्थेदार अवतार सिंघ ने कहा कि ज्ञानी तरलोचन सिंघ का अचानक इस लोक से चले जाना अत्यंत दुखदायी है। पंथ ज्ञानी जी की सेवाओं को सदा याद रखेगा। उन्होंने कहा कि ज्ञानी तरलोचन सिंघ एक बेदाग शख़्सियत के मालिक थे। महान शख़्सियत होने के कारण उनके लिए यह गर्व वाली बात थी कि उन्हें खालसा पंथ की जन्म-भूमि तख़्त श्री केसगढ़ साहिब, श्री अनंदपुर साहिब के जत्थेदार के रूप में सेवा करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। उन्होंने कहा कि मेरी वाहिगुरु के समक्ष अरदास है कि वो ज्ञानी जी को अपने चरणों में निवास दे तथा उनके परिवार को सुख, शांति एवं चढ़दी कला में रखे। उन्होंने कहा कि ज्ञानी तरलोचन सिंघ के निधन के कारण शिरोमणि गु. प्र. कमेटी के मुख्यालय सहित अन्य सभी संस्थाओं में दो दिन के लिए अवकाश घोषित कर दिया गया है।

कैलिफोर्निया में गुरुद्वारा साहिब पर हुए जातीय हमले की जत्थेदार अवतार सिंघ ने घोर निंदा की

श्री अमृतसर : २ अगस्त : अमेरिका के शहर कैलिफोर्निया में स्थित गुरुद्वारा साहिब पर हमला करके शरारती तत्वों द्वारा की गई तोड़फोड़ तथा दीवारों पर लिखी एतराजयोग्य शब्दावली की जत्थेदार अवतार सिंघ, अध्यक्ष, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी ने कठोर शब्दों में निंदा करते हुए अमेरिकी प्रशासन से शरारती तत्वों को जल्द गिरफ्तार कर सज़ा देने की मांग की है।

जत्थेदार अवतार सिंघ ने कहा कि जिन लोगों का कोई धर्म नहीं होता वही लोग ऐसी घिनौनी हरकत करते हैं। ऐसे लोगों की इच्छा होती है कि समाज के शांतमयी माहौल को खराब किया जाए। उन्होंने कहा कि पिछले वर्ष भी इन्हीं दिनों विस्कानसिन के गुरुद्वारा साहिब ओककरीक में एक सिरफिरे गोरे ने छः सिक्ख श्रद्धालुओं को गोली मार दी थी। उन्होंने अमेरिका सरकार को ज़ोर देकर कहा कि इस बात की जांच होनी चाहिए कि सिक्खों के विरुद्ध काम कर रही ऐसी कौन-सी ताकत है जिसे शांतिप्रिय सिक्ख अच्छे नहीं लगते। उन्होंने अमेरिका सरकार से अपील की कि वो ऐसे

असामाजिक तत्वों को पकड़कर सलाखों के पीछे डाले तथा सिक्खों एवं उनके धर्म-स्थानों की सुरक्षा को विश्वसनीय बनाए।

धर्म प्रचार कमेटी ने रायपुर में गुरमति विद्यालय खोला

श्री अमृतसर : ३० जुलाई : सिक्ख धर्म के प्रचार-प्रसार के लिए दृढ़ संकल्प लिए हुए शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी की धर्म प्रचार कमेटी ने छत्तीसगढ़ राज्य के रायपुर में गुरमति विद्यालय खोलकर एक कदम और आगे बढ़ाया है। धर्म प्रचार कमेटी का पंजाब से बाहर खुला यह पहला गुरमति विद्यालय है जिसमें ग्रंथी सिंघों के लिए द्विवर्षीय गुरमति कोर्स करवाया जाएगा।

गुरमति विद्यालय की आरंभता के शुभ अवसर पर उपरोक्त जानकारी देते हुए स. सतबीर सिंघ, सचिव, धर्म प्रचार कमेटी ने बताया कि गुरुद्वारा नानकसर रावाभाटा, बिलासपुर रोड, रायपुर की लोकल कमेटी ने गुरुद्वारा साहिब का सारा प्रबंध शिरोमणि गु. प्र. कमेटी के हवाले कर दिया है। उन्होंने बताया कि यहां पर खोले गए गुरमति विद्यालय में फिलहाल २० सीटें हैं जिसमें ग्रंथी सिंघ बनने के लिए द्विवर्षीय गुरमति कोर्स करवाया जाएगा। उन्होंने बताया कि यहां पर कोर्स करने वाले शिक्षार्थियों को निःशुल्क निवास के अलावा १२०० रुपए प्रति माह वज़ीफे के रूप में भी दिए जाएंगे। इस गुरमति विद्यालय का प्रभारी स. जसपाल सिंघ को नियुक्त किया गया है। स. सतबीर सिंघ ने बताया इस गुरमति विद्यालय के खुलने से छत्तीसगढ़ के सिक्ख विद्यार्थियों को विशेष लाभ पहुंचेगा तथा वे गुरमति एवं गुरबाणी का अच्छे-से प्रशिक्षण ले सकेंगे।

इस अवसर पर उपस्थित छत्तीसगढ़ राज्य में अल्पसंख्यक आयोग के अध्यक्ष स. दलीप सिंघ तथा उड़ीसा सिक्ख प्रतिनिधि बोर्ड के अध्यक्ष स. गुरमीत सिंघ ने शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के अध्यक्ष, जत्थेदार अवतार सिंघ का गुरमति विद्यालय खोलने के उपलक्ष्य में विशेष रूप से धन्यवाद किया। इस समारोह में धर्म प्रचार कमेटी के उप सचिव स. भुपिंदरपाल सिंघ भी उपस्थित थे।

ज्ञानी मल्ल सिंघ तख्त श्री केसगढ़ साहिब के नए जत्थेदार होंगे

श्री अमृतसर : १५ अगस्त : सिंघ साहिब ज्ञानी तरलोचन सिंघ के आकस्मिक निधन के बाद तख्त श्री केसगढ़ साहिब, श्री अनंदपुर साहिब के जत्थेदार के पद पर ज्ञानी मल्ल सिंघ को सुशोभित करने का निर्णय शिरोमणि गु. प्र. कमेटी की कार्यकारिणी की एकत्रता में सर्वसम्मति से लिया गया। इससे पहले ज्ञानी मल्ल सिंघ श्री हरिमंदर साहिब, श्री अमृतसर के मुख्य ग्रंथी के पद पर सेवारत थे। कार्यकारिणी सदस्यों ने जत्थेदार ज्ञानी तरलोचन सिंघ के आकस्मिक निधन पर शोक व्यक्त करते हुए उनकी सेवाओं को याद कर उन्हें श्रद्धांजलि दी।

प्रिंटर व पब्लिशर स. दलमेघ सिंघ ने गोल्डन आफसेट प्रेस, गुरुद्वारा रामसर साहिब, श्री अमृतसर से छपवा कर मालिक शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के लिए कार्यालय, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर से प्रकाशित किया। प्रकाशित करने की तिथि : ०१-०९-२०१३